कुरुक्षेत्र

नवम्बर 1993

तीन रुपये

ग्रामीण महिलाओं के लिए कुटीर उद्योग

लघु उद्यमों से 14 लाख शिक्षित युवाओं को रोजगार

सरकार आठवीं पंचवर्षीय योजना की शेष अवधि के लिए देश के 14 लाख शिक्षित युवाओं को रोजगार प्रदान करने के लिए सात लाख लघु उपक्रम स्थापित करने पर विचार कर रही है।

नई दिल्ली में इस वर्ष 13 सितम्बर को राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों के मुख्य सचिवों के सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए उद्योग राज्य मंत्री श्री एम. अरुणाचलम ने कहा कि सात लाख लघु उपक्रमों में से 40 हजार उपक्रमों को इस साल स्थापित करने का प्रस्ताव है तथा 1994-95 के बाद प्रत्येक वर्ष ऐसे 2 लाख 20 हजार उपक्रम स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है। उन्होंने कहा कि भारत का अनुभव यह रहा है कि एक लघु उपक्रम लगाने से औसतन दो व्यक्तियों को रोजगार मिलता है।

श्री अरुणाचलम ने मुख्य सचिवों को बताया कि यह राष्ट्रीय महत्व की योजना है और इसे पूरी निष्ठा के साथ 2 अक्तूबर, 1993 से लागू करना है। इस योजना के अन्तर्गत दस लाख शिक्षित बेरोजगार युवाओं को स्व रोजगार उपलब्ध कराया जाना है जिसके लिए उन्हें उद्योग, सेवा और व्यापार के क्षेत्र में उपक्रम स्थापित करने में मदद की जाएगी।

श्री अरुणाचलम ने कहा कि सरकार बसें चलाने, कम्प्यूटर केन्द्र स्थापित करने आदि जैसी सामूहिक गतिविधियों के लिए धन जुटाने पर विचार करेगी बशर्ते एक से अधिक आवेदक आपस में मिलकर एक उद्यम स्थापित करें।

वर्ष 39 अंक 1 कार्तिक-अग्रहायण 1915 नवम्बर 1993

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य, चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

संपादक	:	**राम बोध मिश्र**
सह संपादक	:	**बलदेव सिंह मदान**
उप संपादक	:	**ललिता जोशी**

उप निदेशक (उत्पादन)	:	**एस.एम. चहल**
विज्ञापन प्रबंधक	:	**बैजनाथ राजभर**
व्यापार व्यवस्थापक	:	**जॉन नाग**
सहायक व्यापार व्यवस्थापक	:	**एडवर्ड बैक**
आवरण सज्जा	:	**आर.के. टंडन**

एक प्रति : 3.00 रु० वार्षिक चंदा : 30 रु०

इस अंक में

भारत के गांव भारत की आत्मा हैं 3
डॉ० उषा अरोड़ा

ग्रामीण विकास : शहरीकरण की समस्या का समाधान 5
डॉ० विपिन कुमार

भारत में इस शताब्दी का भीषणतम भूकंप 7
वेद प्रकाश अरोड़ा

ग्राम प्रशासन का विकेन्द्रीकरण : एक मूल्यांकन 11
डॉ० जी.एल. गौड़

खुशामद पुराण 14
मनोज कुमार श्रीवास्तव

ग्रामीण युवा स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम : एक विश्लेषण 16
भंवर लाल हर्ष

ग्रामीण महिलाओं के लिए कुटीर उद्योग 19
डॉ० नीलमा कुंवर एवं अंजू खरे

बिहार में सुखाड़ और बाढ़ की अंतहीन कथा 21
डॉ० देवनारायण महतो

तपता सोना 24
डॉ० शीतांशु भारद्वाज

अमरीकन लड़की का भारत के गांव से लगाव 27
एस.पी. मित्तल

पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 29
प्रकाश जैन

गांवो में जरूरी है शौचालयों का प्रबंध 34
ललन कुमार प्रसाद

ग्रामीण विकास : प्रयोग से परिणाम तक 37
एल.वी. प्रसाद

ग्रामीण ऋणग्रस्तता के कारण 40
प्रो. पी.पी. बुधलाकोटी एवं एस.एस. सजवान

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

पाठकों के विचार

'कुरुक्षेत्र' के अगस्त 93 अंक में डा. आनंद तिवारी का आलेख "सामाजिक परिवेश में नारी की भूमिका" प्रेरक लगा। दुनिया की इस आधी आबादी को आज जिस प्रकार से दोयम दर्जे का नागरिक समझा जाता है, वह किसी से छिपा नहीं है। सृष्टि की रचना में पुरुष और स्त्री दोनों की बराबर बराबर की सहभागिता रही है, यहां तक कि हमारे प्राचीन ग्रन्थों में भी नारी को अर्द्धांगिनी कहा गया है। निस्संदेह प्राचीन काल में नारियों की एक सम्मानजनक स्थिति थी, लेकिन उस समय नारी को एक सामान्य नारी न समझकर देवी के रूप में देखा जाता था। कालान्तर में मध्य काल के आते-आते नारी महज घर की शोभा और उपभोग की वस्तु बनकर रह गयी। इसमें कोई शक नहीं कि मध्य काल में नारी की स्थिति सबसे बदतर थी। पुरुष -प्रधान समाज ने नारी को हमेशा अपने वश में रखना चाहा, इसलिए उसने नारी को कभी अपने समकक्ष नहीं माना। या तो उसने उसे देवी के रूप में मानकर सम्मान दिया या उसे दासी के रूप में माना। देवी या दासी मानने का परिणाम हुआ कि स्त्री कभी भी पुरुष का विरोध न कर सकी।

वर्तमान काल में भी नारी की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती, हां पहले से स्थिति सुधरी जरूर है। तीसरी दुनिया के देशों में तो नारी की स्थिति अब भी बहुत कम सुधरी है। भारत में अब भी दहेज प्रथा और बाल विवाह जैसी समस्याएं मुंह बाए खड़ी हैं। अब भी हम पुत्र और पुत्री के स्तर पर अपनी मानसिकता को नहीं बदल पाये हैं।

अगर हमें एक सभ्य समाज और राष्ट्र का निर्माण करना है तो हमें स्त्रियों के प्रति अपनी मानसिकता को बदलना पड़ेगा वर्ना समाज का यह एक महत्वपूर्ण पहिया जिस दिन टूट जायेगा उस दिन हमारी जीवन-लीला भी समाप्त हो जायेगी।

संजय कुमार प्रसाद ,
ग्राम-पत्रालय पंजवार,
जिला सीवान (बिहार) 841210

ग्राम्य विकास की मुख्य धारा प्रवाहित करने वाली तथा गांवों के समग्र विकास के लिए संकल्पित-समर्पित पत्रिका है 'कुरुक्षेत्र'। मैं इसे गत 30 वर्षों से पढ़ रही हूं और इसमें 10 वर्षों से सारस्वत सहयोग दे रही हूं। इसलिए कि यह स्तरीय, मौलिक एवं विचारोत्तेजक सामग्री का अक्षय कोष है। 'पाठकों के विचार' स्तंभ देखकर प्रसन्नता हुई। अगस्त 93 अंक ग्रामीण विकास के मुख्य घटक सड़क पर केन्द्रित है। साथ ही इसमें महिलाओं के विकास, जनसंख्या नियंत्रण, डंकेल प्रस्ताव, बायोगैस तथा ग्रामीण कार्यक्रमों के लिए नई योजना का आकलन मूल्यांकन है। नवीन पंत एवं प्रदीप पंत के लेख विशेष महत्व के हैं; श्रमिक महिलाओं की समस्याएं तथा उनके सामाजिक दायित्व पर अजय कुमार जी ने सम्यक प्रकाश डाला है। मैं शुभकामना करती हूं कि यह इसी प्रकार ग्रामीण विकास के स्वप्न सार्थक करती रहे।

डा. विमला उपाध्याय,
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग ,
एस. एस. एल. एन. टी. महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय
धनबाद-826001 (बिहार)

भारत के गांव भारत की आत्मा हैं

डा० उषा अरोड़ा

शहरों की चकाचौंध कृत्रिम जीवन और दूषित वातावरण से दूर प्रकृति की गोद में बसे गांव सुंदरता का भंडार हैं। खेती में लहलहाती हुई फसलें ग्रामीणवासियों के जीवन निर्वाह का साधन हैं। आज भी सीधे, सहज और अपनी भारतीय संस्कृति को समेटे गांववासियों का भोलापन, अतिथि सत्कार और अपने तीज त्यौहारों से जुड़े ये लोग भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसीलिये महात्मा गांधी ने कहा था "भारत की आत्मा गांव में ही है", भारत माता ग्रामवासिनी है।

भारतीय गांव प्रकृति का वरदान है। प्राकृतिक सौन्दर्य-सुषमा के घर हैं, भारत के निवासियों के लिए अन्न, फल-फूल, साग-सब्जी, दूध-घी के प्रदाता हैं। सेना को सैनिक, पुलिस को सिपाही और श्रमिक-प्रतिष्ठानों को मजदूर गांवों से ही मिलते हैं।

दूसरी ओर, भारतीय गांव भारत की सबसे पिछड़ी बस्ती हैं, दरिद्रता की साकार प्रतिमा हैं, अज्ञान और अशिक्षा की धरती हैं, रोग और अभावों के अड्डे हैं, ईर्ष्या और द्वेष के अग्नि-कुंड हैं, शिक्षालयों और औषधालयों की पहुंच के परे हैं, मुकदमेबाजी के अखाड़े हैं।

भारतीय गांव सदियों से शोषित हैं, पीड़ित हैं। महाजन, सेठ-साहूकार, राजनेता, राज्य-कर्मचारी, पुलिस, धर्म के ठेकेदार, संस्कृति के रक्षक तथा गांवों के लठैत उसको लूट रहे हैं। गांव का किसान शहर में मजदूरी करने को विवश है।

गांवों की दुर्दशा का मुख्य कारण है अशिक्षा। स्वतंत्रता के पश्चात गांव में प्राथमिक शिक्षा का प्रबंध हो गया है, किंतु हाई स्कूल और कॉलिज तो अब भी कस्बों और नगरों में हैं। ग्रामीण नारी तो अब तक "काला अक्षर भैंस बराबर" की कहावत को चरितार्थ करती आ रही है।

अशिक्षा अज्ञान की जननी है। अज्ञान अंधकार का पथ-प्रदर्शक है। ईर्ष्या द्वेष की सहयोगी है। दूसरे के खेत का पानी अपने खेत में कर लेना, दूसरे की कटी फसल अपने खेत में डाल लेना, दूसरे के हरे-भरे खेतों में अपने पशु छोड़ देना किसान की अज्ञानता के प्रतीक हैं। जिससे अदावत हो उसके पशु हंकवा लेना, खेत कटवा देना, खलिहान फूंक देना, घर में सेंध लगवा देना आम प्रवृत्ति है। बात-बात में झगड़ना, लट्ठ बरसाना, भाले फरसे निकाल लेना ग्रामीण का स्वभाव बन गया है। अज्ञान के अंधकार के कारण वह मेहनत की कमाई को मुकदमेबाजी में बरबाद करता है।

अज्ञानता का दुष्परिणाम है कि सेठ साहूकार ग्रामवासियों को लूटते हैं। पांच देकर दस पर अगूंठा टिकवाते हैं। जन्मोत्सव, शादी तथा अन्य धार्मिक और पारिवारिक उत्सवों में ग्रामीणजन झूठी शान में चादर से बाहर पैर पसारते हैं और अपने भविष्य में अंधकार को निमंत्रण देते हैं। अपना भला-बुरा सोचने की समझ उनमें नहीं है।

भारतीय गांव सभ्यता और आधुनिक सुख सुविधा से कोसो दूर हैं। अपवाद रूप में कुछ पक्के मकानों को छोड़कर कच्चे मकान और झोपड़ियां वहां के निवास स्थान हैं। पेय जल का वहां अभाव है। मल मूत्र विसर्जन की विधिवत निकासी नहीं। गांवों में गड्ढे सड़ते हैं, दुर्गंध पैदा करते हैं। बिजली के लाभ से वे वंचित हैं। गांव में चिकित्सालय नहीं। प्रशिक्षित डॉक्टर नहीं, क्वालिफाइड नर्स नहीं। नीम हकीम का राज है। जादू टोना आज भी ग्रामवासियों के स्वस्थ रहने की औषधि है। गंडा-ताबीज उनके स्वास्थ्य प्रहरी हैं, भाग्यविधाता हैं। इसीलिए गांव में बच्चे जन्म से रोगी होते हैं।

गांव का पंडित गांव का देवता है। धर्मभीरू गांववासियों के लिए वह परमात्मा का प्रतिनिधि है। कर्मकांड के नाम पर वह खूब शोषण करता है। धर्मभीरू ग्रामवासी परम्पराओं और रूढ़ियों में उसी प्रकार बंधे हुए हैं, जिस प्रकार बंदरिया मरे हुए बच्चे को छाती से चिपकाए रहती है।

गांव गरीबी का अड्डा है। गरीबी जीवन का अभिशाप है। न तन ढकने के लिए मौसमानुकूल वस्त्र हैं, न खाने के लिए

पौष्टिक भोजन और न रहने के लिए सुविधापूर्ण मकान। फटे चीथड़े कपड़े पहनकर ग्रामीण सर्दी-गर्मी झेलता है। रूखी सूखी रोटी को अचार या नमक से खाकर उदर की ज्वाला शांत करता है। कच्चे मकान या झोंपड़ी में रहकर मौसम के आक्रोश को बरदाश्त करता है। उसके बच्चे उच्च शिक्षा के लिए शहर जा नहीं सकते। बीमारी को पराजित करने के लिए वह रोग-विशेषज्ञ का लाभ उठा नहीं पाता। उसका पशु-धन पौष्टिक आहार के अभाव में कृशकाय होता जाता है।

हमारे गांवों के लिये यह समय बहुत दुष्कर है। गांव वाले शहर की चकाचौंध से अब अनभिज्ञ नहीं रह गये हैं। शहर की गर्म हवाएं अब गांव वालों को छूने लगी हैं। वे लोग भी अब शहरी बाबू की तरह पैंट और टाई लगाकर दफ्तर जाने को सोचते हैं। खेती करना या अपने पैतृक काम करना अब उन्हें नहीं भाता है। गांव के लोग गांव की चारदीवारी से निकलकर शहर की ओर भाग रहे हैं। यह बात दो दृष्टियों से उचित नहीं है। एक तो शहरों पर बाहरी दबाव पड़ता है और हर चीज पर इसका प्रभाव पड़ता है और वह दूसरी बात यह है कि गांवों में जो पैतृक धंधे हैं, वे मिटते जा रहे हैं।

शिक्षा बहुत जरूरी है पर शिक्षा का प्रयोग केवल दफ्तरों की नौकरी की तलाश के लिये नहीं, बल्कि हर क्षेत्र में उपयोगी हो। खेती के नये तरीके, ट्रेक्टर का प्रयोग, नयी-नयी खाद आदि विभिन्न जानकारियां शिक्षा द्वारा ही मिल सकती हैं। शिक्षित होकर गांव वाले अपने ही काम को आगे बढ़ायें, उसमें उन्नति करें यह लाभप्रद होगा। इससे उनकी आय में वृद्धि होगी, उनका रहन-सहन बढ़ेगा, आर्थिक स्थिति सुधरेगी और खेती में लोगों की अभिरुचि बढ़ेगी। फलतः बेकारी की समस्या भी नहीं उठेगी और शहरीकरण भी नहीं होगा। कुटीर उद्योगों और वहां के स्थानीय धंधों को बढ़ावा देने से ग्रामीण जनता का खाली समय उपयोगी कामों में लगेगा। अन्न की उपज बढ़ने से देश की खाद्य समस्या का समाधान होगा। गरीबी स्वयं अनेक समस्याओं की जननी है। अतः उसका अस्तित्व मिटने पर सभी समस्याएं भी मिट जायेंगी।

भारतीय गांव जहां शारीरिक तथा मानसिक दुर्बलता के आगार हैं वहां उनमें नई चेतना, नई ज्योति, नया जीवन भी आया है। आर्थिक शोषण से मुक्ति के लिए सहकारी बैंक स्थापित हुए हैं। जमींदारों की जमीन छीनकर किसानों में बांट दी गई। भूदान यज्ञ ने किसान को भूमि का मालिक बनाया। भूमि कानून लागू कर भूमि सीमा निश्चित कर दी। छोटे खेतों की समस्या का समाधान चकबंदी तथा सहकारी खेती द्वारा किया गया। फसल को शहर तक पहुंचाने के लिए गांव को पक्की सड़कों से जोड़ा गया। ऋण देकर ट्रेक्टर दिए, कर्ज देकर सुंदर बीज दिया, उर्वरक खाद दी है। गांव को शिक्षित करने के लिए रेडियो और दूरदर्शन से फसल उगाने की नसीहतें और ग्राम्य जीवन सुधार कार्यक्रम चल रहे हैं। ग्राम सेवक-सेविकाएं ग्रामवासियों के लिए देवदूत हैं, जो हर संभव सहायता को तत्पर रहते हैं। कृषि उन्नति के लिए कृषि विश्वविद्यालय स्थापित हो गए हैं।

ग्राम पंचायतों का पुनर्गठन किया जा रहा है। अशिक्षा का अंधकार दूर होता जा रहा है। गांव-गांव में प्राथमिक शिक्षा का जाल बिछा है। कस्बों में हाई स्कूल खुल गए हैं, नगरों में कालिज खुल गए हैं। विश्वविद्यालय की शिक्षा ग्रामवासी की पहुंच में आ गई है। बिजली ने गांवों में प्रकाश फैलाया, रेडियो ने ज्ञानवर्धन किया, जगती से गांव का संबंध स्थापित किया। बुद्धिमान चतुर और समझदार ग्रामवासी इन योजनाओं से लाभान्वित हो सभ्यता की दौड़ में धावक बन गए हैं। पढ़-लिखकर उच्च पदों पर पहुंच गए हैं। बढ़ई, लुहार, चमार के बेटे क्लर्क और अधिकारी बन गए हैं। किसान का बेटा प्रांत और राष्ट्र का भाग्यविधाता बनने लगा है।

सभ्यता की नई किरण से ग्राम की पलकें फड़फड़ाई तो किंतु वे खुली नहीं। आज भी गांवों में पुश्तैनी लड़ाइयां, ईर्ष्या, द्वेष अशिक्षा, महाजनी वृत्ति, धार्मिक भीरुता विद्यमान है।

गांवों में इन सबके सुधार के लिये योजनायें तो बहुत बनी हैं पर अधिकतर उनमें से कागज में बन कर रह गई हैं। सही ढंग से क्रियान्वित नहीं की गई हैं। दोष योजनाओं में नहीं वरन् उन्हें क्रियान्वित करने वालों में है। जिस तरह देश की औद्योगिक उन्नति के लिये स्टील कारखाने की योजना, भिलाई, दुर्गापुर राउरकेला योजना आदि योजनाएं बनी हैं उसी तरह गांव की सफलता के लिये वास्तविक और ठोस कदम उठाने होंगे तभी गांव और गांववासियों में झूमती हुई फसलों की तरह खुशी की लहर दौड़ सकेगी।

ए.5, एन. बी. सी. कालोनी
जयपुर, (राजस्थान)

ग्रामीण विकास : शहरीकरण की समस्या का समाधान

डा० विपिन कुमार

"भारत माता ग्रामवासिनी
खेतों में फैला-है श्यामल
धूल भरा मैला-सा आंचल...

उपरोक्त पंक्तियां महान कवि सुमित्रानंदन पंत की हैं। भारत को कृषि प्रधान देश कहा गया है। आज भी भारतवर्ष की कुल आबादी का 74.28 प्रतिशत गांवों में निवास करता है — इसीलिए कवि ने भारत माता को ग्रामवासिनी कहा है। सचमुच देखा जाय तो भारत की आत्मा गांवों में ही बसती है। इसलिए भारत के ग्रामीण विकास से ही भारत की उन्नति संभव है। महात्मा गांधी ने भी कहा था कि "भारत ग्राम प्रधान देश है और कृषि भारत की आत्मा है।" उनका जोर भी ग्रामीण विकास की तरफ ही था। प्राचीन काल में हमारे गांव खुशहाल व संपन्न थे। बाद में, गांवों में विकास की पूर्ण संभावनाओं के बावजूद गांवों का अपेक्षित विकास नही हो सका। दुर्भाग्यवश, आज गांवों से युवाओं, कृषकों, कृषि श्रमिकों व व्यवसायियों का पलायन बड़ी तेजी से शहरों की ओर हो रहा है — इसका प्रतिकूल असर एक तरफ गांवों के विकास पर पड़ रहा है तो दूसरी तरफ शहरीकरण की समस्या उत्पन्न हो रही है।

शहरों में बढ़ते औद्योगिकरण व निर्माण के प्रति रोजगार के आकर्षण में ग्रामीण जनसंख्या तेजी से शहरों की ओर पलायन कर रही है। गांवों में उद्योगों का नितांत अभाव होने के कारण बड़ी संख्या में ग्रामीण क्षेत्र के लोग बेरोजगार हैं। गांवों की जनशक्ति शहरों में फैले भवन-निर्माण व अन्य उद्योगों की ओर तेजी से पलायन कर रही है। शहरी क्षेत्र के कारखानों व भवनों के निर्माण में ग्रामीण जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग लगा हुआ है। इस पलायन की वजह से ही औद्योगिक व शहरी क्षेत्रों में गांवों से आकर बसने वाले श्रमिकों की गंदी बस्तियां बस गई हैं। इससे गांवों में विकास रुक सा गया है, और शहरों में बेरोजगारी, प्रदूषण के स्तर में वृद्धि, नागरिक सुविधाओं में गिरावट, अपराध और दुर्घटनाओं की दर में तेज वृद्धि, भूमि और आवास की बेतहाशा बढ़ती कीमतें तथा मलिन बस्तियों और फुटपाथ पर रहने वाले लोगों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। शहरी जीवन की समस्याओं, यहां के रहन-सहन की बिगड़ती हुई स्थिति के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए राजनीतिज्ञों, नगर-नियोजकों, पत्रकारों, पर्यावरण विशेषज्ञों और जनसंख्या विशेषज्ञों आदि ने इसके लिए मुख्य रूप से जिम्मेवार ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को ही माना है — जो यहां आकर बस रहे हैं। गांवों से आनेवाले लोगों के बारे में ऐसा समझा जाता है कि उन्हें शहरी मूल्यों या रहन-सहन के तरीकों की कोई जानकारी नहीं होती। उन्हें स्वास्थ्य के बारे में भी बहुत ही कम जानकारी होती है। इन्हीं कमियों की वजह से शहरी जीवन स्तर में गिरावट आती है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों से बड़ी संख्या में शहरों में लोगों के पलायन को शहरी जीवन-स्तर में गिरावट का बुनियादी कारण माना जाता रहा है।

शहरी आबादी और गांवों से शहरों को पलायन के मामले में केवल संख्या ही चिन्ता का कारण नहीं है — बल्कि यह भी महत्वपूर्ण है कि यह वृद्धि हो कहां रही है। ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन पिछड़े क्षेत्रों या राज्यों में अधिक देखा गया है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए ये राज्य हैं — उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान और उड़ीसा। यदि गांवों में रोजगार देने की गति धीमी रही तो गांवों से शहरों में जानेवाले लोगों की संख्या और बढ़ेगी। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि गांवों की खुशहाली में देश की खुशहाली निहित है। गांवों को आगे बढ़ाकर ही देश को आगे बढ़ाया जा सकता है। इस सत्य को दृष्टिगत रखकर ही गांवों में आर्थिक क्रांति लाने के लिए युवकों को ही अपना योगदान देना होगा। यदि ये युवक साहस के साथ गांवों में ही छोटे-छोटे उद्योग धंधे स्थापित करें तो स्वयं व अन्य लोगों को भी रोजगार दे सकते हैं। इससे गांवों की दशा सुधर सकती है। इस दिशा में सरकार के द्वारा भी समय-समय पर अनेक प्रयत्न किये गये किंतु प्रभावी क्रियान्वयन के अभाव में वे कारगर सिद्ध नहीं हो सके। ग्रामीणों के जीवन-स्तर में शहरों की तुलना में विशेष सुधार

नहीं हो पाया। अब समय आ गया है कि सरकार पिछड़े व ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग लगाने के लिए उद्योगपतियों को प्रोत्साहित करे व पर्याप्त सुविधा मुहैया कराए। सरकार शहरी क्षेत्रों में उद्योग लगाने को हतोत्साहित करे। यह हतोत्साहन अधिक करों, बिजली व पानी की ऊंची दरों और जमीन के अधिक मूल्य के रूप में हो सकता है। ग्रामीण युवकों की 'ट्राइसेम' सरीखी योजनाएं व्यापक पैमाने पर क्रियान्वित कर प्रशिक्षित करें तथा स्वरोजगार हेतु पर्याप्त ऋण मुहैया कराये। गांवों में ही पर्याप्त रोजगार का सृजन कर शहरोन्मुख जनसंख्या को रोका जा सकता है। इससे शहरीकरण की समस्या समाप्त नहीं पर कम अवश्य होने लगेगी।

गांवों से शहरों की ओर पलायन के कारणों में एक प्रमुख कारण जनसंख्या का तेजी से बढ़ना भी है। जनसंख्या में तीव्र गति से हो रही वृद्धि और उस अनुपात में साधनों की कमी के कारण लोग कृषि पर से भरोसा छोड़ कर अन्य धंधों की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर जाते हैं। गांवों में उपलब्ध प्रचुर जनशक्ति को गांव में श्रम प्रधान उद्योग लगाकर खपाया जा सकता है। इससे ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को गांव में ही रोजगार प्राप्त हो जायेगा — उनके रहन-सहन के स्तर में सुधार हो जायेगा। फलस्वरूप, गांवों में खुशहाली आ जायेगी और शहरों की तरफ पलायन की रफ्तार कम हो जायेगी। परिवार नियोजन द्वारा जनसंख्या पर नियंत्रण रखकर पलायन के एक कारण को कम किया जा सकता है। छोटे परिवार का भरण पोषण गांवों में उपलब्ध सीमित साधनों में भी ठीक प्रकार से किया जा सकता है। परिवार नियोजन द्वारा परिवार के सुखद भविष्य का प्रचार-प्रसार गांवों में करना जरूरी है।

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि पर आधारित है। लेकिन इस तथ्य से हम सभी लोग अवगत हैं कि भारतीय कृषि पिछड़ी हुई है — इसलिए कृषकों व कृषि श्रमिकों का पिछड़ा होना स्वाभाविक है। भारत में जमींदारी प्रथा समाप्त हो जाने पर भी कृषि योग्य भूमि का बहुत बड़ा भाग उन लोगों के पास है जो स्वयं खेती नहीं करते हैं। ऐसे लोग खेतों में स्वयं श्रम नहीं करके श्रमिकों का श्रम खरीदते हैं — बदले में थोड़ा अनाज या बहुत ही कम मजदूरी देते हैं। दूसरी तरफ आज भी भारतीय कृषि प्रकृति पर ही निर्भर है। इसका बहुत बड़ा भू-भाग आज भी असिंचित है खेती करने के तौर-तरीके भी पुराने है — जिससे उपज काफी कम होती है। यह बढ़ती हुई जनसंख्या की पूर्ति में कम पड़ जाता है। यह कमी वैज्ञानिक ढंग से खेती नहीं होने, कृषि उत्पादन की लागत में वृद्धि होने, जोतों का उचित प्रयोग नहीं होने, ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन, तथा कृषि कार्य में रुचि घट जाने से आयी है। इससे कृषि के भविष्य पर प्रश्न-चिन्ह लग सकता है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए किसी भी कीमत पर इसे उचित नहीं ठहराया जा सकता है। औद्योगिक विकास के लिए भी कृषि - उत्पादों का उत्पादन बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। ग्रामीण विकास की रीढ़ कृषि विकास ही है। यदि गांवों का विकास करना है तो कृषि कार्य वैज्ञानिक ढंग से करना होगा। कृषि मजदूरों को उचित व नगद मजदूरी देने की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर सकें। कृषि की दशा में सुधार हो इसके लिए कृषि संबंधी शिक्षा और जानकारी का प्रसार, ग्रामीण विद्युतीकरण, सिंचाई सुविधाओं को बेहतर बनाना, कृषि अनुसंधान तथा बढ़िया बीजों और उर्वरकों का इस्तेमाल शामिल है। इसके साथ-ही-साथ सरकार कृषकों के अन्न भंडारण हेतु गोदाम की व्यवस्था करे। जिन राज्यों में हरित क्रांति सफल हुई है वहां ग्रामीण आय बढ़ गई है, किसानों का रहन-सहन का स्तर सुधर गया है। इसके उदाहरण पंजाब और हरियाणा सरीखे कृषि प्रधान राज्य हैं। ग्रामीण समृद्धि के कारण विकसित हुए कस्बों के माध्यम से शहर और गांव के बीच संतुलन काफी मजबूत हुआ है।

युवकों को ग्रामीण विकास की धारा से जोड़ने के लिए यह जरूरी है कि व्यावसायिक शिक्षा व प्रशिक्षण द्वारा स्वावलंबन की भावना पैदा की जाए — जिससे वे गांवों में भी स्वरोजगार की स्थापना कर सकें। 'ट्राइसेम योजना' इसमें काफी महत्वपूर्ण हो सकती है। गांवों में रोजगार का वातावरण बनाने से स्वतः ही पलायन रुकने लगेगा। शिक्षा को रोजगारोन्मुख बनाना भी अत्यंत आवश्यक है — इससे ग्रामीण युवक शिक्षा प्राप्त कर गांव में ही रोजगार प्राप्त कर सकेंगे। ग्रामीण युवकों को विशेष रूप से ग्रामीण परिवेश के अनुरूप ही शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए जो गांवों के विकास व देश के विकास में सहायक हो।

ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन को रोकने के लिए एक अन्य कारगर उपाय है कि गांवों में रोजगार की सुविधाओं का विस्तार किया जाए। इसके लिए यह ध्यान रहे कि गांवों के संसाधनों का प्रयोग गांवों के विकास के लिए ही किया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन के लिए गांवों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना होगा। ऐसे उद्योगों के प्रसार पर महात्मा

(शेष पृष्ठ 18 पर)

भारत में इस शताब्दी का भीषणतम भूकंप

✍वेद प्रकाश अरोड़ा

30 सितम्बर की ब्रह्मवेला, महाराष्ट्र के दक्षिण पूर्वी भाग—मराठवाड़ा-क्षेत्र में लातूर और उस्मानाबाद जिलों के निवासियों के लिए प्रलय वेला बन कर आई। एक दिन पहले वहां के वातावरण में थिरकन थी, हर्ष-उल्लास था, राग रंग था, गणपति बाबा मोरया के उत्सव में भाग ले रहे हर वर्ग के नर- नारियों, बच्चे- बूढ़ों, युवक-युवतियों के जीवन में उछाल था, उमंग और उत्साह था। भारी थकान के बाद लोग ढलती रात में गहरी निद्रा के आगोश में बेहोश से सोए हुए थे कि तभी मौत ने पलक झपकते उनके ऊपर कफन की लंबी काली चादर ओढ़ा दी। ओढ़ाई भी ऐसे कि जिन्दगी चीख तक न सकी और ओंठ सहायता की गुहार के लिए खुल भी न सके। मौत ने जीवन को बहुत ही बेरहमी से दबोच लिया। दृश्य इतना हृदय विदारक, इतना लोमहर्षक था कि पास- पड़ोस में और दूर -दूर सब तरफ तबाही ही तबाही बिखरी थी। सब तरफ मरघट की खौफनाक निस्तब्धता थी। बयासी गांवों में से 25 गांवों में तो जीवन का नामोनिशान तक मिट गया। वहां न कोई किसी का दर्द सुनने वाला रहा और न सुनाने वाला। वहां के सभी निवासी आसमानी कफन ओढ़े अपने प्रियजनों, स्वजनों और सगे-संबंधियों से अपनी पीड़ा कहे-सुने बिना इस लोक से अलविदा हो गए। इस भूकंप के झटके महाराष्ट्र में ही नहीं, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, पांडिचेरी, उड़ीसा, गुजरात, गोआ और मध्य प्रदेश के कई हिस्सों में भी महसूस किये गये। बीदर, बीजापुर और गुलबर्गा में भी तबाही हुई और अनेक व्यक्तियों की जीवनलीला के आगे विराम चिह्न लग गया। लेकिन मौत का भरपूर वार मराठवाड़ा के लातूर और उस्मानाबाद ज़िलों को झेलना पड़ा। रिक्टर स्केल पर छह अंक की तीव्रता दर्ज़ करने वाले इस भूकंप का पहला झटका सवेरे तीन बजकर 56 मिनट पर आया। उसके बाद तीन और झटके आए और हज़ारों की जिन्दगी झटक कर चले गए। उसके बाद से इस क्षेत्र में रह-रहकर हल्के झटके आते रहे हैं। पिछले वर्ष भी इस क्षेत्र में कोई 150 बार भूकंप के हल्के झटके आए थे। तब किसी ने इन्हें गंभीरता से नहीं लिया था।

भारत में इस शताब्दी के इस सर्वाधिक विनाशकारी भूकंप तथा दो वर्ष पहले अक्तूबर 1991 में उत्तर प्रदेश में गढ़वाल क्षेत्र के उत्तर काशी इलाके में आए भूकंप के जरिए प्रकृति बार-बार प्रचंड नाद से घोषणा करती रही है कि उस पर किसी का वश या अंकुश नहीं है। कोई दावे से नहीं जानता कि अगला भूकंप कब, कहां और कितने चढ़े तेवर के साथ अपना विकराल रूप प्रकट करेगा। भूकंपों के पूर्वानुमान शायद ही कभी विश्वसनीय बन सकें, और भूकंप विज्ञान शायद ही कभी निश्चित रूप से कुछ कह सके। संभवतः उसका शैशवकाल ही उसके लिए लक्ष्मण- रेखा बना रहेगा। भविष्यवाणियां प्रायः अंधेरे में तीर चलाने जैसी होती हैं। परंतु अक्सर देखा और सुना गया है कि भूकंपों का पूर्वाभास पशु-पक्षियों और जीव -जंतुओं को हो जाता है। जैसे चीन के हाई चैंग क्षेत्र में फरवरी 1975 में आए भूकंप से कुछ दिन पहले सांप और मेंढक अपने बिलों से बाहर आ गए थे। मुर्गियों के अपने बाड़ों को फांद कर दूर भाग जाने तथा कुत्तों के चिल्लाने भौंकने और चक्कर लगाने की हरकतें देखने में आई थीं। इधर महाराष्ट्र के भूकंप पीड़ित क्षेत्रों के अनेक निवासियों के कथनानुसार भूचाल आने से पहले पालतू जानवरों के व्यवहार में अजूबापन आ गया था तथा गाएं, भैंसें बें बें करने लगी थीं।

तो भी यह एक शाश्वत सत्य है कि इस भूलोक में भूकंप जैसी प्राकृतिक विपदाएं सृष्टि की उत्पत्ति के समय से ही आती रही हैं और आती रहेंगी। हमारी इस धरती पर प्रत्येक वर्ष औसत से 120 भीषण भूकम्पों के आते रहने से कोई 10 हजार से 15 हजार व्यक्ति मौत के शिकार हो जाते हैं, तथा अरबों-खरबों की सम्पत्ति क्षणों में मलबे के ढेर में बदल जाती है। सन् 1000 के बाद से आए भूकंपों में अब तक 25 लाख से अधिक व्यक्ति मौत के मुंह में समा चुके हैं। इस शताब्दी का सबसे विनाशकारी भूकंप जुलाई 1976 की रात को चीन के औद्योगिक नगर तंगशान और त्येनसिन में आया था जिसमें लगभग सात लाख व्यक्तियों को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा था।

भूकंप क्यों आते हैं? इसके अलग-अलग कई कारण हो सकते हैं, पौराणिक गाथाओं अथवा लोक कथाओं के अनुसार हमारे इस भूमंडल को शेषनाग अपने फन पर उठाए हुए हैं। जब यह फन इधर उधर डोलने लगता है तो धरती भी हिल उठती है। यूनान के जाने- माने गणितज्ञ पैथागोरस के अनुसार भूत प्रेतों के आपस में लड़ने से यह धरती कांप उठती है। जापान में प्रचलित दंत कथा के अनुसार विशाल आकार का एक मकड़ा पृथ्वी को अपने ऊपर उठाए हुए है। जब वह चलता है तो पृथ्वी भी चलने लगती है। कुछ धर्मभीरू व्यक्तियों के अनुसार जब बेहद बढ़े पापों को पृथ्वी झेल पाने में अक्षम हो जाती है, तो वह डोलने लगती है। लेकिन वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी के अंदर कोई ज्वालामुखी फटने, चट्टानों की परतें टूटने, चट्टानों के खिसकने से भ्रंश या दरारें बनने अथवा भरने, पृथ्वी के सिकुड़ने, ध्रुवों और महाद्वीपों के अपनी स्थिति बदलने, उनके आपस में टकराने आदि से भूकंप आते हैं। कभी कभी बड़े बांधों के निर्माण से भी भूकंप आ जाते हैं। जहां तक भारत के नीचे की धरती का संबंध है, इंडियन प्लेट हर वर्ष कोई साढ़े पांच सेंटीमीटर की चाल से उत्तर-पूर्वी दिशा में खिसकती जा रही है। वह स्थिर यूरेशियन प्लेट से टकराकर हिमालय क्षेत्र में भूकंप को जन्म देती रहती है। कहते हैं कि 1991 में उत्तर काशी में आया विनाशकारी भूकंप इस टकराव के कारण आया। भूकंप विशेषज्ञों के अनुसार महाद्वीपों के परस्पर टकराने या अपनी भौगोलिक स्थिति बदलने से लंबी-लंबी दरारें बन जाती हैं जिन्हें भूगोल की भाषा में भूकंप की प्रमुख पट्टियां कहते हैं। कुछ भूगर्भीय वैज्ञानिकों के अनुसार भारत का दो तिहाई हिस्सा इसी भूकम्पीय पट्टी पर विराजमान है। अगर यह बात सच है तो जम्मू-कश्मीर, पंजाब, उत्तरी सीमा क्षेत्र, गुजरात मे कच्छ का रण और अंडमान द्वीप समूह इस पट्टी के दायरे में आते हैं, जो एक शुभ शगुन नहीं हैं।

इस भयावह स्थिति में बल्कि यूं कहना चाहिए सभी दैवी विपदाओं के आगे मानव पंगु बनकर रह जाता है। प्रकृति को खुश करने के लिए ही वह कभी सूर्य को पानी देता है, कभी गंगा यमुना आदि नदियों में पुष्प पत्र प्रवाहित करता है। इस सबके बावजूद वह प्रकृति को अपना क्रूर तांडव करने से नही रोक सकता। लेकिन इस तांडव से कम से कम विनाश हो और विनाश के बाद वह फिर खड़ा हो — इसके लिए ही उसे उपाय करना उसका एक कर्तव्य ओर विवशता दोनों है। यही बात ध्यान में रखते हुए मराठवाड़ा के भूकम्प से ध्वस्त क्षेत्रों में सबसे पहले मलबे के पहाड़ों को हटाते हुए लोगों को मुस्तैदी से बाहर निकालने और उनकी जीवन-लीला समाप्त होने से बचाने को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। इस काम में स्वयंसेवी संगठनों, स्थानीय अधिकारियों, पुलिस कर्मचारियों तथा सेना के जवानों का कार्य सराहनीय रहा। कहीं बुलडोजर चलाकर रुकावटें हटाई गईं तो कहीं फावड़े और गैंती से जमीन पर से परत दर परत मलबा हटाया गया, कहीं पत्थरों के नीचे गहरे दबे हुए व्यक्तियों की जान बचाने के लिए सूंघू कुत्ते काम में लाए गए तो कहीं रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन के अत्यंत संवदेनशील विशेष उपकरणों का प्रयोग किया गया। इस तरह अनेक व्यक्तियों को मौत की गुफा से बाहर निकाल नया जीवन दिया गया। इसके बाद राहत और सहायता कार्यों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। सरकारी कर्मचारियों और स्वयंसेवी संगठनों ने कंधे से कंधा मिलाकर दिन-रात काम किया। सहायता अभियान में 15 हजार से अधिक सैनिकों ने प्रशासनिक कर्मचारियों तथा अधिकारियों की मदद की। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद सेना का यह सबसे बड़ा अभियान था।

जो मर चुके हैं, उन्हें कोई भी वापस नहीं ला सकता। जो बचे हैं, उनका दुख दर्द भी कोई पूरा बांट नहीं सकता। सगे संबंधियों का हमेशा के लिए बिछुड़ जाने का उन्हें जो गहरा सदमा लगा है, और जो मर्मांत पीड़ा हुई है और होती रहेगी, वे तो स्वयं उन्हें ही झेलनी पड़ेगी, लेकिन बाहर की और बाद की जिन्दगी की तल्खियां भी कम नहीं रहतीं। जिन सुहागिनों का सुहाग उजड़ा है, या जो बच्चे अनाथ हो गए हैं, उन्हें पेट की आग बुझाने के लिए रोटी, तन ढकने के लिए कपड़ा और सर छिपाने के छत -छप्पर चाहिए। इन और अन्य भूकंप पीड़ितों की सहायता के लिए प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने चार अक्तूबर को क्षत-विक्षत और ध्वस्त हुए गांवों का दौरा किया। उनके साथ लोकसभा अध्यक्ष श्री शिवराज पाटिल, महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री शरद पवार और लोकसभा में विपक्ष के नेता श्री अटल बिहारी वाजपेयी भी थे। अपने इस दौरे के बाद प्रधानमंत्री ने संवाददाताओं को बताया कि भूकंप पीड़ितों की सहायता के लिए केन्द्र 50 करोड़ रुपए और देगा, जिससे पुनर्वास काम अधिक तेजी और मुस्तैदी से पूरा किया जा सके। बताया गया कि इस प्रलयकारी त्रासदी में 30 हजार से अधिक व्यक्ति मौत के मुंह में समा चुके हैं, कई अभी जिन्दगी और मौत के बीच झूल रहे हैं, तथा 12 हजार व्यक्ति घायल हो गए हैं। मौत के इस तांडव

में कुछ गांवों में एक भी व्यक्ति आंसू बहाने के लिए नहीं बचा है। सैयद उमरगा और किल्लारी गांव में शायद ही कोई मकान साबित दिखाई देता हो, उस्मानाबाद ज़िले का सस्तूर गांव तो बिल्कुल सपाट मैदान दिखाई देता था। कुछ गांव तो जमीनदोज़ हो गए, तो कुछ के भग्नावशेष अपनी आंसू भरी कहानी कह रहे थे। संभवतः यह तबाही इसीलिए अधिक भयंकर बन गई कि मकान पत्थरों से बने थे और पत्थरों को गारे से जोड़ा गया था और वे ताश के पत्तों की तरह बिखर गए। मलबे के नीचे जीवित अथवा मृत व्यक्तियों को बाहर निकालने का काम पूरा हो जाने के बाद बचे हुए व्यक्तियों को पुनर्वास तथा गांवों के पुनर्निर्माण की ओर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया। भूकंप पीड़ितों की हर तरह से सहायता के लिए सारे राष्ट्र ने एक अनूठी एकजुटता दिखाई। कहीं शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों ने बूट पालिश कर, रामलीला कमेटियों ने चंदे उगाह कर या सिने कलाकारों ने मंचीय प्रदर्शन कर, तो कहीं खिलाड़ियों ने मैच आयोजित कर या फिर गरीब से गरीब मजदूरों, पल्लेदारों ने अतिरिक्त समय में गाढ़े पसीने से कमाई हुई राशि भूकंप पीड़ितों की सहायता के लिए देकर प्रमाणित कर दिया कि संकट के समय समुदायों, सम्प्रदायों और क्षेत्रों के सभी विवाद छोड़कर सारे देशवासी सांझे मंच पर आ खड़े होते हैं। इस प्राकृतिक विपदा को एक घोर राष्ट्रीय संकट मान कर केन्द्र और राज्य सरकारें, सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन, सार्वजनिक एवं निजी उद्योग, सरकारी और स्वयंसेवी संस्थाएं तथा सत्ताधारी और प्रतिपक्षी दल, सभी वैचारिक बंधनों को तोड़कर, दलगत राजनीति को ठोकर मारकर तथा स्थानीय संकीर्णताओं से ऊपर उठकर, भूकंप पीड़ितों की भरपूर सहायता के लिए दौड़ पड़े। राहत और सहायता कार्य युद्ध स्तर पर हाथ में लिए गए। तड़ित वेग से काम करते हुए अधिकतर गांवों में बिजली की सप्लाई आरंभ कर दी गई। भूकंप प्रभावित इलाकों में संचार सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए सात हॉटलाइन और एक एस. टी. डी. टेलीफोन सेवा केन्द्र खोला गया। संचार के सभी प्रमुख सम्पर्क बहाल कर दिए गए। यहां के लोगों को निःशुल्क टेलीफोन करने का सुविधा उपलब्ध कराई गई। उधर शिविरों में ही बच्चों की पढ़ाई की व्यवस्था की गई तथा सभी शिक्षा संस्थाएं फिर खोल देने की व्यवस्था की गई। पन्द्रह दिन से छह वर्ष की आयु के 400 से अधिक बच्चों तथा लगभग 500 विधवाओं को अस्थाई शिविरों में रखा गया। अनेक स्वयंसेवी संगठनों ने इन बेसहारा बच्चों और विधवाओं के पालन पोषण की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने की उत्कट इच्छा व्यक्त की। अनेक विपदाग्रस्त गांवों में टीन के शेड, तम्बू और दूसरे अस्थाई शरण-स्थल बनाए गए, जहां जीवित बचे हुए हजारों व्यक्तियों को प्रतिदिन दो बार खाना खिलाया गया। वहां रोज़मर्रा की आवश्यक वस्तुएं भी जुटाई गईं। रेड क्रास ने भी खाने पीने की चीजें, सिलेसिलाए कपड़े और सूती कम्बल भूकंप पीड़ितों की सहायता के लिये भेजे। महाराष्ट्र सरकार ने लगभग ढाई करोड़ रुपए का कपड़ा मुसीबतें झेल रहे व्यक्तियों को तन ढकने के लिए बांटा। राष्ट्रीय कपड़ा निगम ने पीड़ित क्षेत्रों के लोगों के लिए 15 हजार ऊनी कम्बल भेजे। अन्य राज्य सरकारों तथा विभिन्न संगठनों से लाखों करोड़ों की नकदी के साथ-साथ खाने-पीने की चीजें, चिकित्सा उपकरण, अन्य सहायता-सामग्री और एम्बुलेंस गाड़ियां मिलने का तांता सा लगा रहा। घायलों के लिए खून की कमी न होने देने के लिए राज्य के कई हिस्सों में रक्तदान शिविर लगाए गए। शवों की सड़ांध और लगातार वर्षा के कारण सफाई न हो सकने के कारण वहां संक्रामक रोग और महामारियां फैलने न पाए, इसके लिए टीके लगाने का अभियान चलाया गया। सेना की एक पूरी टुकड़ी ने 'आपरेशन सहायता' के नाम से राहत और सहायता कार्य युद्ध स्तर पर किया। सेना के दो इंजीनियर रेजीमेंट भी दिन-रात सहायता कार्यों में लगे रहे। सेना के ही 40 डॉक्टरों और मैडिकल स्टाफ ने गांवों में फील्ड अस्पताल खोले जिनमें फ्रैक्चर तक का उपचार किया गया। जहां तक रेलों का संबंध है उसने भूकंप पीड़ित क्षेत्रों से लोगों को निकालने के लिए विशेष रेलगाड़ियां चलाई। इस काम में ट्रकों की सहायता भी ली गई। रेल विभाग ने खाने की चीज़ें मुफ्त देने के लिए लंगर भी खोले।

विदेशों से भी वहां की सरकारों और वहां बसे प्रवासी भारतीयों ने दिल खोलकर करोड़ों की धनराशि, चिकित्सा और गैर-चिकित्सा सामग्री भेजी। संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक, यूनेस्को तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठन भी सहायता देने में पीछे नहीं रहे। जहां तक दीर्घकालीन उपायों का संबंध है, बेसहारा बच्चों और विकलांग हुए व्यक्तियों की समस्याएं हल करने के लिए कल्याण मंत्रालय ने एक विशेष कार्य योजना बनाई। अगर कुछ संस्थाएं और निजी व्यक्ति बेसहारा बच्चों को गोद लेने के लिए आगे आए तो कुछ अन्य संस्थाओं एवं व्यक्तियों ने समूचे गांव को फिर से बसाने और वहां लोगों के पुनर्वास का आद्योपांत काम अपने हाथ में लेने का निर्णय किया। केन्द्रीय दलों ने पुनर्वास

कार्यों का जायज़ा लेने तथा आवश्यक सहायता पहुंचाने के लिए भूकंप पीड़ित क्षेत्रों का दौरा किया। साथ ही केन्द्र ने हुडको की सहायता से मकान बनाने की एक विशेष योजना तैयार की। ये मकान इस ढंग और इस डिज़ाइन के बनाए जा रहे हैं कि इन पर भूकंप का असर न हो। एक हजार दो सौ मकान बनाए भी जा चुके हैं। अन्य एक हजार मकानों का निर्माण कार्य भी पूरा होने को है। इस बात की व्यवस्था की गई कि भूकंप से ध्वस्त हुए गांव सुरक्षित स्थानों पर बनाए और बसाए जाएं। उधर विश्व बैंक ने भारत सरकार के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किए जिसके अंतर्गत भारत को इन भूकंप पीड़ित क्षेत्रों के पुनर्निर्माण के लिए अगले तीन वर्षों में 30 लाख डालर का रियायती ऋण दिया जाएगा। विश्व बैंक से सम्बद्ध संस्था अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी से आसान शर्तो पर प्राप्त इस ऋण राशि का उपयोग भूकंप झेल सकने वाले मकान बनाने के साथ-साथ सड़कों, दूर संचार, बिजली, पीने के पानी की सप्लाई जैसे बुनियादी आवश्यकताएं पूरी करने, बांधों के निर्माण और जरूरी चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था के लिए किया जायेगा। विश्व बैंक ने भूकंप पीड़ित क्षेत्रों में आवास और दूसरी मूल सुविधाओं में गुणात्मक सुधार के उद्देश्य से विस्तृत व्यावहारिकता परियोजना बनाने के लिए अलग से भी 15 लाख डालर दिए। दीर्घकालीन योजना के अंतर्गत ही केन्द्र सरकार ने देश के भूकंपीय क्षेत्रों का सर्वेक्षण करने तथा उनका मानचित्र तैयार करने का फैसला किया। सोयाबीन, अंगूर और गन्ने की खेती के लिए प्रसिद्ध इस क्षेत्र में कृषि कार्यों में कोई बाधा न हो और किसान आर्थिक दृष्टि से अपने पांव पर फिर खड़े हो सकें - इसके लिए बुआई, कटाई तथा अन्य कृषि-कार्य जारी रखने के लिए बीज़, कृषि औज़ार और ट्रैक्टर दिए गए।

लेकिन अफसोस है कि ऐसा समय जब सारा राष्ट्र एक आदमी की तरह भूकंप पीड़ितों की सहायता के लिए उठ खड़ा हुआ, कुछ समाज विरोधी चेतना शून्य व्यक्ति मृतक नर-नारियों के शरीरों से अंगूठियां, झुमके, मंगलसूत्र तथा अन्य गहने उतार कर भाग जाने से बाज नहीं आए। इसी तरह सामाजिक भावना से हीन कथित स्वैच्छिक संगठन, व्यापारियों और अन्य लोगों से भूकंप पीड़ितों की सहायता के नाम पर धन ऐंठते रहे या जाली रसीदें देकर धन एकत्र करते रहे। समाज को ऐसे हृदयहीन समाजविरोधी तत्वों का पता लगाकर उन्हें कड़ी से कड़ी सजा देने में चूक नहीं करनी चाहिए, वरना दूसरों के दुख दर्द में अपनी रोटियां सेंकने से घृणित पेशे को बढ़ावा मिलेगा। इन लोगों को आड़े हाथों लेने के साथ-साथ भूकंप पीड़ित क्षेत्र के लोगों में विश्वास जगाने और उन्हें फिर से अपने व्यवसाय में जुट जाने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना भी अत्यंत आवश्यक है।

268, सत्यनिकेतन, मोती बाग,
नानकपुरा, नई दिल्ली-110021

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में 'पाठकों के विचार' नाम से एक नया स्तम्भ प्रारम्भ कर रहें हैं। इस स्तम्भ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार-ढाई सौ शब्दों से अधिक न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, कमरा न० 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परन्तु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तम्भ में प्रकाशित होंगे।

– सम्पादक

ग्राम प्रशासन का विकेन्द्रीकरणः एक मूल्यांकन

✍डॉ. जी. एल. गौड़

भारत एक ग्राम प्रधान देश है। जैसा कि राष्ट्रपिता गांधी ने कहा था, "भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है।" भारत की लगभग 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। सन् 1991 की जनगणनानुसार लगभग 63 करोड़ भारतीय जनसंख्या ग्रामीण है। फलतः ग्रामीण विकास ही भारत का असली विकास है। देश की अधिकांश जनसंख्या को विकास परिधि में लाना ग्रामीण विकास योजनाओं के माध्यम से ही संभव है। भारतीय संविधान देश में प्राजातांत्रिक प्रशासन की स्थापना करता है। जैसा कि अब्राहिम लिंकन का मानना है, "प्रजातंत्र जनता का, जनता के लिए तथा जनता के द्वारा होता है।" स्पष्ट है कि प्रजातंत्र में जन-सहभागिता अनिवार्य एवं आवश्यक होती है।

प्रशांसन के विकेन्द्रीकरण का तात्पर्य निर्णय लेने एवं क्रियान्वयन करने की शक्ति एवं अधिकार का विस्तार होना होता है। ग्रामीण प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के स्वरूप को फलीभूत करने के लिए भारत में "पंचायत राज" स्थापित किया गया है। पंचायत राज व्यवस्था प्राचीन भारत में सदा ही विद्यमान रही है। लगभग 400 ईसा पूर्व के ऐतिहासिक ग्रंथ, कौटिल्य का 'अर्थ शास्त्र' तथा 'मनुस्मृति' आदि इस बात के साक्षी हैं कि ग्रामीण समस्याओं का समाधान 'ग्राम सभा' एवं उसके 'मुखिया' के द्वारा किया जाता था। किन्तु दुर्भाग्यवश विदेशी राज्य, विशेष रूप से ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के बाद धीरे-धीरे स्थानीय प्रशासन व्यवस्था धराशायी हो गयी और प्रशासन चन्द लोगों के हाथों का खिलौना बन कर रह गया। जमींदारी प्रथा, जागीदारी प्रथा, रैयतवाड़ी व्यवस्था ने ग्राम प्रशासन का केन्द्रीकरण कर दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बलवंत राय मेहता समिति, 1957 की सिफारिश के आधार पर भारत में पंचायत राज संस्थाओं की स्थापना की गई। इसे कारगर रूप से लागू करने के लिए सर्वप्रथम 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान राज्य के नागौर कस्बे में तत्कालीन प्रधान मंत्री पं. नेहरू ने पंचायत राज की नींव रखी। इसके बाद सम्पूर्ण भारत में इसे लागू किया गया। इस प्रकार राजस्थान राज्य को ग्रामीण प्रशासन का विकेन्द्रीकरण जैसे महान कार्य का शुभारम्भ करने वाले राज्य होने का गौरव प्राप्त है। इससे पूर्व जमींदारी प्रथा से अनेक प्रकार से ग्रामीणों का शोषण किया जाता था। पंचायत राज व्यवस्था ग्रामीणों को अकुशल नौकरशाही के शोषण से मुक्ति दिलाती है। हाल ही में भारतीय संविधान का 73वां संविधान संशोधन इस व्यवस्था को संवैधानिक जामा पहनाकर और मजबूती प्रदान करेगा।

पंचायत राज संस्थाओं की स्थापना से ग्रामीण जनता में आत्म-निर्भरता और स्वावलंबन की भावना बढ़ती है, उनमें स्थानीय समस्याओं के बारे में निर्णय लेने की शक्ति का संचार होता है। इतना ही नहीं अपितु स्थानीय योजनाएं बनाने में वे अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। पंचायत राज व्यवस्था जनता में दायित्व की भावना का विकास एवं प्रसार करती है। निर्णय लेने वाली संस्था ही क्रियान्वयन का कार्य करती है। अतः निर्णय (योजना) एवं क्रियान्वयन (व्यवहार) में अन्तर नहीं रहता है। वर्तमान में, पंचायत राज संस्थाएं ही सरकारी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू करने वाली महत्वपूर्ण इकाई मानी जाती हैं। इस प्रकार, पंचायत राज संस्थाएं गणतंत्र की प्रथम सीढ़ी हैं जिनके माध्यम से ग्रामीण एवं स्थानीय जनता में कुशल नेतृत्व एवं राजनीतिक इच्छा शक्ति उत्पन्न करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। कई राष्ट्रीय नेता इन्हीं संस्थाओं से प्रशिक्षण प्राप्त करके आज देश में प्रशासन की बागडोर संभाले हुए हैं तथा राष्ट्रीय राजनीति के क्षितिज पर चमक रहे हैं। यह प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के माध्यम से ही संभव बना है।

वर्तमान स्वरूपः उपलब्धियां

भारत में पंचायत राज संस्थाओं का स्वरूप एवं ढांचा अलग अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न है। अधिकांश राज्यों में इन संस्थाओं का त्रि-स्तरीय ढांचा, 5 राज्यों में द्वि-स्तरीय तथा 8 राज्यों में एक-स्तरीय ढांचा अपनाया गया है। राजस्थान में त्रि-स्तरीय स्वरूप अपनाया गया है। आज ग्राम-स्तर पर जनता की भागीदारी

प्रशासन में बढ़ी है। उनमें राजनीतिक चेतना एवं जागृति का विकास हुआ है। यह पंचायत राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है। ग्रामीण जनता कम साक्षर होते हुए भी राजनीतिक रूप से परिपक्वता रखती है। उसमें राजनीतिक एवं प्रशासकीय निर्णय लेने की शक्ति का संचार पंचायत राज संस्थाओं से ही संभव हुआ है। पंचायत राज संस्थाओं ने ग्रामीण जनता का सामाजिक एवं राजनीतिक विकास किया है।

व्यावहारिक धरातल पर दृष्टिपात किया जाय तो सिक्के का दूसरा पहलू अधिक गम्भीरता लिए हुए है — आज पंचायत राज संस्थाएं ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीतिक दंगल के लिए मात्र अखाड़ा बन कर रह गयी हैं। ग्रामों का राजनीतिक विभाजन हो गया है। राष्ट्रपिता के भारत की आत्मा के टुकड़े राजनीतिक दलों में बिखर गए हैं। ग्रामीण पृष्ठ-भूमि से जुड़े लोग ही आज की इस वास्तविकता को समझ सकते हैं। 'यदि गांव में पंचायत राज के चुनाव न होते गांव के लोगों में वैमनस्य उत्पन्न नहीं होता' ऐसा कहना कोई अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है और न ही विकेन्द्रीकृत प्रशासन का विरोध।

द्वितीय, पंचायत राज संस्थाओं के माध्यम से ग्राम प्रशासन का विकेन्द्रीकरण एवं आम जनता की सहभागिता आज, मृगमरीचिका मात्र बन कर रह गयी है। पहले गांव का प्रशासन जमीदारों (एक कुल) के हाथ में था, वह अब कुछ निश्चित परिवारों या लोगों के हाथ में आ गया है। विगत 35-40 वर्षों में लगातार प्रत्येक गांव में एक व्यक्ति/परिवार के लोग ही सरपंच बनते आ रहे हैं। इसका कारण आम व्यक्ति की कमजोर आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति मानी जा सकती है। व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर लेखक जानता है कि सरपंच के चुनाव में एक दो लाख रुपये खर्च होना सामान्य बात है। तृतीय, गांव में सरपंच/वार्ड पंच के चुनावों में उम्मीदवारी के आधार पर गांव का विभाजन हो जाता है। यह विभाजन स्थायी रूप धारण कर लेता है। एक उम्मीदवार सरपंच बन जाता है और दूसरा हार जाता है तो दोनों के समर्थक एक दूसरे वर्ग से स्थायी रूप से संबंध विच्छेद कर लेते हैं। यहां तक कि एक दूसरे के यहां सामाजिक पर्व या दुर्घटना तक में जाना पसंद नहीं करते हैं। ग्राम प्रशासन के विकेन्द्रीकरण ने ही ग्रामीण जनता के हृदयों को बांट दिया है। इस आधार पर, भले ही आर्थिक कार्यक्रमों एवं रोजगार योजनाओं को गांव के धरातल में पहुंचाने में हम सफल रहे हैं किन्तु सामाजिक पतन एवं मानवीय विनाश दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

चतुर्थ, ग्राम पंचायत के चुनाव व्यक्तिपरक होते हैं, दलपरक नहीं। एक व्यक्ति ने उम्मीदवार के पक्ष में वोट नहीं दिया तो वह उसका व्यक्तिगत शत्रु माना जाता है और यह शत्रुता स्थायी बन जाती है। कई बार स्थानीय मुकदमेबाजी, हत्याएं तक हो जाती हैं।

पंचम, ग्राम प्रशासन पर नौकरशाही पूरी तरह से हावी रहती है। स्थानीय जनता में प्रशासकीय अकुशलता, नेतृत्व का अभाव, अशिक्षा के कारण सरकारी अधिकारी पंचायत राज संस्थाओं पर हावी रहते हैं। जिला प्रमुख का अतिरिक्त जिलाधीश/निदेशक, जिला ग्रामीण विकास अधिकरण पर सीधा नियंत्रण नहीं होता है। नौकरशाही के स्तर पर ग्राम प्रशासन का ढांचा अलग है। इनका पंचायत राज संस्थाओं से तालमेल नहीं बैठ पाता है। फलतः सरकार से आने वाला पैसा गांवों तक पहुंचने में प्रशासनिक बाधा आ जाती है। स्वीकृत राशि का एक बड़ा भाग प्रशासनिक अकुशलता का शिकार बन जाता है। इसे सरकारी स्तर पर भी स्वीकार किया जाता है।

षष्ठम, राज्य में ग्राम विकास योजना लागू रखने के लिए राज्य सरकार जिला परिषदों को आर्थिक सहायता देती है, जिला परिषद पंचायत समिति को तथा पंचायत समिति ग्राम पंचायत को इसका वितरण करती है। किन्तु व्यवहार में वितरण का आधार ग्रामीण आवश्यकता न हो कर राजनीतिक स्वार्थ पूर्ति होता है। जिला प्रमुख या प्रधान के दल के समर्थक सरपंचों को तो सहायता मिल जाती है किन्तु विरोधी दलवाले गांव/सरपंच अभाव में ही रहते हैं।

सप्तम, पंचायत राज संस्थाओं के चुनाव समय पर नहीं होते हैं। वर्तमान राजस्थान में ही एक लम्बे अन्तराल से ये संस्थाएं भंग पड़ी हैं। इससे स्थानीय विकास योजनाओं में तो बाधा आती ही है साथ ही स्थानीय नौकरशाही जनता पर हावी रहती है।

अंतिम, वित्तीय साधनों का अभाव पंचायत राज संस्थानों की प्रमुख समस्या है। राज्य सरकारें भी वित्तीय दृष्टि से मजबूत एवं आत्मनिर्भर नहीं हैं। इसके साथ ही जिला परिषद, पंचायत समितियां, ग्राम पंचायत अपने स्तर पर अनुत्पादक एवं प्रशासनिक खर्चों में कटौती करने को तैयार नहीं हैं।

सुझाव

वर्तमान परिवेश में, आवश्यकता है पंचायत राज संस्थाओं को सुदृढ़ एवं सक्रिय बनाने की। ऐसा कार्य जनता की सक्रिय साझेदारी से ही संभव है। ग्राम पंचायतों के चुनाव समय पर करवाएं जाएं। एक निश्चित अवधि के बाद अनिवार्यतः चुनाव होंगे तो जन-प्रतिनिधियों की जबावदेही जनता के सामने बनी रहेगी। उन्हें चुनावों के समय अपने कार्यों का लेखा जनता को प्रस्तुत करना होगा। निर्धारित जन-कल्याण कार्य अपने कार्यकाल में पूरा न करने वाले जन-प्रतिनिधियों को दुबारा चुनाव जीतने का मौका नहीं मिलेगा। इस प्रकार योग्य एवं कर्मठ नेता को मौका मिलेगा। अब यह संवैधानिक अनिवार्यता कर दी गयी है। जनता में शिक्षा का प्रसार हो एवं वह अपने राजनीतिक अधिकारियों के प्रति सजग बने तो ये संस्थाएं सुदृढ़ बन सकती हैं। ग्रामीण योजनाएं नीचे से ऊपर की ओर चलें। स्व. राजीव गांधी ने एक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया था, योजना निर्माण का विकेन्द्रीकरण। इसके माध्यम से स्थानीय समस्याओं का सरलता से समाधान हो सकता है। पंचायत राज संस्थानों को वित्तीय स्वायत्तता प्रदान की जाए। इस दृष्टिकोण से 73 वां संविधान संशोधन महत्वपूर्ण है। इससे नौकरशाही का नियंत्रण इन संस्थाओं पर कम होगा क्योंकि वित्तीय साधनों की स्वीकृति के अधिकार से ही नौकरशाही पंचायत राज संस्थाओं पर हावी हो जाती है। जब ये संस्थाएं अपने निजी स्तर पर वित्तीय साधन जुटाएंगी या सीधा सरकार से आर्थिक सहयोग मिलेगा, तो इनकी वित्तीय स्वायत्तता बढ़ेगी।

आज ग्रामीण स्तर पर स्वयंसेवी संस्थाओं की आवश्यकता है जो जनता को राजनीतिक रूप से शिक्षित बनाएं। जनता में मानवीय विकास करें। चुनाव के बाद पुनः लोग जुड़े रहें। ऐसा पुनीत कार्य स्वयंसेवी संस्थाएं ही कर सकती हैं।

पंचायत राज संस्थाओं को प्रभावी बनाने के लिए उनमें प्रत्येक स्तर पर परस्पर समन्वय की अति-आवश्यकता है। जिला-परिषद, पंचायत समितियां एवं ग्राम पंचायतें परस्पर मिल कर कार्य करेंगी तभी ग्राम प्रशासन को सुदृढ़ आधार मिलेगा। इसके अभाव में ये संस्थाएं बिखर कर मात्र संवैधानिक खाना पूर्ति रह जाएगी तथा ग्राम प्रशासन के विकेन्द्रीकरण का स्वप्न टूट कर धराशायी हो जाएगा।

निष्कर्ष

सार रूप में, पंचायत राज संस्थाएं ग्रामीण शासन का विकेन्द्रीकरण करने के अपने मौलिक उद्देश्यों में असफल रही हैं। उन्हें सुदृढ़ मानवीय आधार की आवश्यकता है। राजनीतिक आधार पर मानव का विभाजन नहीं होना चाहिए। ग्राम-स्तर के विकास कार्यक्रमों में मानव-विकास कार्यक्रम भी रचा जाये। मनुष्य का संतुलित विकास हो, यह आज की जरूरत है। इसके लिए हमें भारतीय दर्शन का सहारा लेना होगा। नेतृत्व की कुशलता की अधिक आवश्यकता है। गांव में स्वार्थपरक राजनीति के प्रवेश पर ग्रामवासियों के द्वारा प्रभावपूर्ण रोक लगानी होगी। आज ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का पूर्ण विनाश हो चुका है। शिक्षा संस्थाओं की संख्यात्मक वृद्धि करने में भले ही, राजनीतिज्ञों की उपलब्धि रही है किंतु गुणात्मक पतन दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। शिक्षकों/शिक्षाधिकारियों पर सरपंच/प्रधान/जिला प्रमुख अथवा अन्य समृद्ध राजनीतियों का वरदहस्त होना है। शिक्षा में राजनीति का प्रवेश शिक्षा व्यवस्था के लिए एक बुराई है। शिक्षित ग्रामीण समाज की स्थापना करनी होगी। पंचायत राज संस्थाओं को शिक्षा में दखलबाजी रोकनी होगी। समाज का साक्षर बनना ही पर्याप्त नहीं है। उसे शिक्षित बनाना होगा तभी पंचायत राज संस्थाओं के माध्यम से प्रशासन का विकेंद्रीकरण फलदायक होगा।

डी-601 मालवीय नगर,
जयपुर - 302017

व्यंग्य

खुशामद पुराण

✍ मनोज कुमार श्रीवास्तव

आज के जमाने में शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा हो जो तरक्की, उन्नति या प्रमोशन न चाहता हो। इस संसार में जो व्यक्ति जहां कहीं भी है, वह तरक्की यानी प्रमोशन तो चाहता ही है।

अब प्रश्न यह है कि तरक्की मिले कैसे? भई ये कोई चावल दाल की तरह राशन की दुकान पर मिलने वाली चीज तो है नहीं जो कार्ड बनाकर ले ली जाये। जनाब, आजकल तो बस एक ही रास्ता है, अरे देखिए तो आपके दिल की धड़कनें बढ़ गयीं न। क्या आप ने 'खुशामद' शब्द के बारे में सुना है! अरे, वही तारीफ कहते हैं जिसे। आप तो पढ़े लिखे हैं फिर भी नहीं सुना। अरे भई इसकी महिमा अपरम्पार है। इस एक शब्द में इतना तेज है, इतना बल है, इतनी सामर्थ्य है कि पत्थर को भी मोम की तरह पिघला दे और चाहे तो मोम की नदियां बहा दे।

अगर गौर करें तो खुशामद से हमारा सम्बन्ध सदियों पुराना है। यदि हम कोई भी धर्म ग्रन्थ देखें तो शुरू में मंगलाचरण या ईश्वर की खुशामद जरूर होती है। यदि ऐसा न करें तो ईश्वर नाराज न हो जाए! फिर खुशामद से कौन खुश नहीं होता। आप नहीं होते खुश जब आपसे कोई कहता है कि अरे आप तो इस ड्रेस में बहुत जम रहे हैं। तब आप भी एक क्षण के लिए शीशे में निहारने लगते हैं अपनी सूरत। भले ही आपकी शक्ल शीशा देखने लायक हो या न हो।

यूं तो खुशामद के कई प्रकार हैं लेकिन महत्वपूर्ण दो ही हैं। इनमें पहला, सबसे मुख्य है अपने 'बास' या 'आका' या 'साहब' की खुशामद करना। शायद इसी से आपकी तरक्की सम्भव है, बस यूं ही समझिये कि सौ प्रतिशत की गारण्टी होती है। यद्यपि है यह एक टेढ़ी खीर, आप यूं कहें कि नाकों चने चबाने पड़ते हैं। परन्तु आप इतना तो जानते ही होंगे कि "हिम्मते मर्दां, मददे खुदा" यानी हिम्मत रखने वालों की सहायता ईश्वर भी करता है और फिर इसका मीठा स्वाद भी तो आप ही चखेंगे न!

अब वे लोहे के चने क्या हैं और किस प्रकार के हैं ये तो आपकी समझ में आने वाली बात है। इसके लिए सबसे पहले तो साहब के स्वभाव को अच्छी तरह समझना चाहिए अर्थात उन्हें क्या-क्या चीजें पसन्द हैं और किनसे नफरत है उन्हें। फिर वह जैसा कहें वैसा करने की पूरी सामर्थ्य होनी चाहिए आपमें। यदि वह दिन को रात कहे तो रात कहिए या रात को दिन कहे तो दिन कहिए। उसके खाने-पीने के पसन्द के बारे में भी आपको जानकारी होनी चाहिए। वह सेवक ही क्या जिसने अपने मालिक की पसन्द ही न मालूम हो कि उसे काजू पसंद है या मुर्गे की टांग

यदि आप ये सब नहीं जानेंगे तो त्यौहार आदि के अवसरों पर उनके घर मिठाइयां और अन्य तोहफे कैसे पहुंचायेंगे। इसके अलावा उनके करीबी दोस्तों, रिश्तेदारों से उसकी तारीफों के पुल बांधने की कला भी आनी चाहिए आपको। इतना ही नहीं बास या 'साहब' की घरवाली को क्या पसंद है, इसके बारे में भी आपको शत प्रतिशत जानकारी होनी चाहिए जैसे उसे सिल्क की साड़ी पसंद है या जार्जेट की। वरना आप परिपक्व खुशामदी नहीं बन पायेंगे। इसके साथ ही साथ 'साहब' के बच्चों को स्कूल पहुंचाने से लेकर उसकी कार या स्कूटर की मरम्मत तक के कार्य कराने की सामर्थ्य आप में होनी चाहिए।

यदि आपने ये सब किया तब तो निश्चय है कि 'खुशामदी की ओलम्पिक' में तरक्की का गोल्ड मेडल आप को ही मिलेगा।

खुशामद का दूसरा प्रकार घरेलू है यानी अपने ही घर में अपनी ही घरवाली की खुशामद करना। यदि आप में यह गुण नहीं तो निश्चित ही आप 'पत्नीव्रता' पति कहलाने योग्य नहीं हैं कहने का अभिप्राय यह है कि आपको घर के कामों जैसे खाना बनाना, झाड़ू लगाना, बर्तन साफ करना, कपड़े धोना इन सब कार्यों के बारे में व्यावहारिक ज्ञान और साथ ही साथ अनुभव भी होना चाहिए। तभी आप अपनी पत्नी को खुश कर पाने में

सफल होंगे।

भई आज का जमाना तो वह नहीं रहा जब किसी ने कहा था-

'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।'

और न ही आज का जमाना यह है कि-

'सांच बराबर तप नही, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदय सांच है, ताके हिरदय आप।।'

अगर गम्भीरता से सोचें तो सब कुछ उल्टा पुल्टा है, जैसे-

'झूठ बराबर तप नहीं, सांच बराबर पाप।
जाके हिरदय झूठ है, ताके हिरदय आप।।'

एक मित्र हैं मेरे। आफिस में तो अपनी बहादुरी की बड़ी-बड़ी डीगें हांका करते थे। एक दिन मैं उनके साथ काफी देर तक घूमता रहा। उन्होंने मुझसे कहा, "अरे यार, आज तो बड़ी देर हो गयी, अब मुझे चलने दो वरना मेरी पत्नी भूखे ही सो जायेगी।"

मैंने पूछा क्यों शादी के तीन साल बाद भी तुम्हारी पत्नी तुम्हें इतना चाहती है कि खाने पर तुम्हारा इन्तजार करेगी। उसने कहा, नहीं... ये बात नहीं है, दरअसल घर जाकर खाना मुझे ही बनाना है। उसकी बात सुनकर मुझे उसकी चमचागीरी को दाद देने को मजबूर होना पड़ा।

वैसे 'खुशामद' तो ऐसा फन है कि बिना इसके समाज में अपनी पहचान नहीं बनायी जा सकती। आपको जब अपने ग्वाले से दूध में पानी कम मिलाने को कहना होता है तो आप उसकी खुशामद ही तो करते हैं, जब आपको अपने घर के सामने लगे कूड़े का ढेर हटवाना होता है तो आप सफाई कर्मचारी की खुशामद ही तो करते हैं।

इसी प्रकार नाई से बाल बनवाने के लिए, बस-ट्रेन में सीट पाने के लिए, पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं छपवाने के लिए खुशामद एक अमोघ अस्त्र का काम करता है। इससे हमारे जीवन का गहरा नाता है।

लेकिन इसका तात्पर्य ये मत समझियेगा कि मेरी यह रचना भी खुशामद के कारण ही प्रकाशित हुई है।

निकट आनन्द मार्ग स्कूल,
बेतियाहाता दक्षिणी,
गोरखपुर-273001

लघु कथा

झुर्रियां

✍डॉ० मोहन चन्द्र पाण्डे

दो बरस की मुनिया ने जब चबूतरे पर आकर प्रधान जी को 'नमस्ते' कहा तो बरबस ही 'खूब बड़ी हो जा, बिटिया' का आशीर्वाद उनके मुंह से निकल गया। धूल में सने सुखिया को लगा जैसे बिटिया सचमुच बड़ी हो गई है, शादी करनी है, जमीन तो पत्नी बीमारी में ही गिरवी रख दी थी, अब किस जमानत पर कर्ज लेगा?

सुखिया के माथे पर पड़ने वल और गालों पर बढ़ती झुर्रियों को देखकर मुझे लगा कि प्रधान जी के आशीर्वाद में भी कितनी पीड़ा है

प्रवक्ता
राजकीय महाविद्यालय,
लोहाघाट (पियौरागढ़) उ. प्र.
पिन 262524

ग्रामीण युवा स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम : एक विश्लेषण

✍ भंवर लाल हर्ष

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विरासत में मिली समस्याओं के समाधान और देश को विकास के उच्चतम शिखर तक पहुंचाने के लिए हमारी सरकार निरंतर कड़ी मेहनत कर रही है। हमने पिछले चार दशकों में विविध योजनाबद्ध कार्यक्रमों के माध्यम से महत्वपूर्ण उपलब्धि भी अर्जित की है अनेक समस्याओं से देश को उबार कर सम्मानजनक स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है। परंतु हम देखते हैं कि एक समस्या आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई है, वह समस्या बेरोजगारी की है

भारत में बेरोजगारी, जिसमें खासतौर पर ग्रामीण बेरोजगारी प्रमुख रूप से तीन प्रकार की है — मौसमी बेरोजगारी, अदृश्य बेरोजगारी व अल्प रोजगार। वास्तव में अधिकांश बेरोजगार व्यक्ति गांवों में ही हैं। आयोजन के प्रारंभ से सरकार ने अलग से इस समस्या के समाधान पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और यह सोचकर की विकास के फलस्वरूप बेरोजगारी की समस्या स्वतः ही हल हो जायेगी, विकास को ही अपनी नीति का केंद्र बिंदु बनाया। अब आगे चलकर इस समस्या ने अपना विकराल रूप धारण किया, तब सरकार ने इसे दूर करने हेतु अनेक प्रत्यक्ष उपायों की व्यवस्था की। चौथी योजना के समय से इस कार्य पर विशेष महत्व और ध्यान दिया जाने लगा।

देश के ग्रामीणों को बेरोजगारी से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार ने समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के तहत "ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण" (ट्राइसेम) की योजना 15 अगस्त, 1979 को प्रारंभ की थी। इसका लक्ष्य उन ग्रामीण युवाओं को तकनीकी तथा उद्यमशीलता की कुशलताएं प्रदान करना है, जो गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वाले परिवारों के हैं, ताकि वे कमाई वाले काम शुरू कर सकें।

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण युवकों को अपनी बेकारी समाप्त करने के लिए स्व रोजगार ढूंढने के लिये सक्षम बनाने हेतु आवश्यक कौशल तथा तकनीकी जानकारी प्रदान करना है। इस कार्यक्रम का लक्ष्य देश के 5011 विकास खण्डों में से प्रत्येक में से 600 परिवारों का चयन करके उन्हें गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने के उद्देश्य से एक मुश्त सहायता देना है।

ट्राइसेम की मुख्य विशेषताएं

1. गांवों में 18-35 आयु वर्ग के उन युवाओं को तकनीकी कौशल प्रदान करना जो गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों के हैं। इससे वे युवा अपना निजी काम धंधा शुरू कर सकते है और कुछ हद तक किसी अन्य आर्थिक क्षेत्र में नौकरी पा सकते हैं।

2. यह प्रशिक्षण औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, नेहरू युवक केन्द्रों, खादी ग्रामोद्योग बोर्डों, राज्य ग्रामीण विकास संस्थानों, विस्तार केन्द्रों और स्वयंसेवी एजेंसियों द्वारा संचालित संस्थानों में कारीगरों द्वारा दिया जाता है।

3. प्रशिक्षण की अवधि घटायी-बढ़ाई जा सकती है। छः माह तक के पाठ्यक्रमों के बारे में जिला स्तर पर और इससे अधिक अवधि के पाठ्यक्रमों के बारे में राज्य स्तर पर निर्णय किया जाता है।

4. ट्राइसेम में प्रशिक्षण पाने वाला प्रत्येक व्यक्ति, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का संभावित लाभार्थी होता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षित इच्छुक व्यक्ति को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत वित्तीय सहायता दी जाती है।

5. प्रशिक्षित किये जाने वाले युवाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के युवाओं की संख्या कम से कम 50 प्रतिशत होती है

कार्यक्रम में प्रशिक्षण एवं वित्तीय व्यवस्था

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न प्रशिक्षण केन्द्रों जैसे ग्राम सेवक प्रशिक्षण केन्द्र, ग्राम सेविका प्रशिक्षण केन्द्रों, कृषक ट्रेनिंग केन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र, आई०टी०आई० तथा अन्य संस्थाओं में प्रशिक्षण के दौरान व्यावहारिक कार्य पर बल दिया जाता है और प्रशिक्षणार्थियों को अपना उद्योग स्वयं आरम्भ करने में सहायता मिलती है। प्रशिक्षणार्थी को प्रशिक्षण मुख्यतः बीज उत्पादन, बागवानी, जन्तु नियंत्रण, मछली पालन आदि क्षेत्रों में प्रदान किया जाता है।

ग्रामीण युवकों को अपने निवास स्थान के गांव में ही प्रशिक्षण प्राप्त करने की स्थिति में 75 रुपये प्रतिमाह और निवास स्थान के बाहर 150 रुपये प्रतिमाह वृतिका दी जाती है। निवास व्यवस्था के अभाव में 200 रुपये प्रतिमाह वृतिका दी जाती है।

प्रशिक्षण देने वालों को 50 रुपये प्रतिमाह प्रति प्रशिक्षणार्थी पारिश्रमिक दिया जाता है। प्रशिक्षण यदि किसी संस्था द्वारा दिया जा रहा हो तो अधिकतम 15 युवकों को प्रशिक्षण दिया जा सकता है। कच्चे माल व अन्य व्यय हेतु प्रशिक्षण संस्थाओं को 50 रुपये प्रतिमाह प्रति युवक व स्थानीय मास्टर क्राफ्ट्समैन को 26 रुपये प्रतिमाह प्रति युवक का मिलता है। प्रशिक्षण के पश्चात 500 रुपये तक के औजार प्रशिक्षणार्थियों को मुफ्त दिये जाते हैं। प्रशिक्षणार्थी को आने जाने का यात्रा का व्यय भी दिया जाता है। साथ 1 अप्रैल 1991 को छात्रवृत्ति की दरें बढ़ाई गई हैं।

ट्राइसेम कार्यक्रम की सफलता

1. **ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षणः** कार्यक्रम के तहत प्रशिक्षण व्यवस्था पर शुरुआत से ही काफी जोर दिया गया जिसके परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहे। कार्यक्रम के अन्तर्गत छठीं योजना में 10.15 लाख युवक प्रशिक्षित किए गए जिनकी संख्या सातवीं योजना में घट कर 9.98 लाख हो गई। वही 1990-91 में 2.36 तथा अप्रैल 1991 से दिसम्बर 1991 तक 1.58 लाख व्यक्तियों को प्रशिक्षण देकर रिकार्ड सफलता अर्जित की गई।
2. **स्वीकृत राशिः** सरकार ने समस्त ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के माध्यम से देश की भूख से बिलखती निर्धन जनता को सहारा दिया है। सरकार ने ट्राइसेम के लिये वर्ष 1990-91 में 390 करोड़ रुपये खर्च किये लेकिन सरकार ने इस कार्यक्रम पर गुणात्मक सुधार को 1991-92 के वर्ष में किया लेकिन व्यय की राशि 390 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 390.4 करोड़ रुपये ही की और वर्ष 1992-93 के लिए 390.2 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई।

लाभान्वित परिवारों की देखभाल

चयनित परिवारों को लाभान्वित किया जा चुका है या नहीं, प्राप्त राशि का सही उपयोग हुआ है या नहीं, लाभान्वित परिवारों को जो पशु उपलब्ध कराये गए हैं वे बीमार तो नहीं है तथा लाभान्वित परिवार प्राप्त किये साधनों का किसी प्रकार से दुरुपयोग तो नहीं कर रहा है, इसकी पूरी जानकारी भी कार्यक्रम में रखी जाती है।

ट्राइसेम कार्यक्रम में मूल बाधाएं

1. ट्राइसेम प्रशिक्षणार्थियों की समन्वित ग्रामीण विकास योजना के साथ तालमेल की कमी।
2. स्वरोजगार के उद्योग के लिए पूर्वापर व्यवस्थाओं का अभाव।
3. इस योजना में प्रशिक्षण हेतु जिन स्वामियों को चुना जाना है उनके चयन का कार्य बाहर की संस्था द्वारा किया जाता है।
4. भ्रष्टाचार का बोलबाला अधिक है।
5. यह कार्यक्रम मुख्य रूप से अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों के लिए है लेकिन उनको इसका पूरा फायदा नहीं मिलता।
6. प्रशिक्षण के पश्चात स्वरोजगार चालू करने हेतु ऋण समय पर नहीं मिलने के कारण स्वरोजगार चालू करने में अत्यधिक कठिनाई होने से नये प्रशिक्षणार्थी रुचि नहीं ले रहे हैं।

कार्यक्रम की सफलता हेतु सुझाव

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में ट्राइसेम कार्यक्रम को भविष्य में और अधिक कारगर ढंग से लागू करने हेतु निम्न सुझावों पर विचार किया जाय, तो सफलता की ओर अधिक संभावनाएं परिलक्षित हो सकती हैं:

1. प्रशिक्षण हेतु न्यूनतम निर्धारित संख्या की औपचारिकता के बजाय जितनी संख्या में युवक प्रशिक्षण लेना चाहें उन्हें ही लिया जाना चाहिये।
2. चयनित प्रशिक्षणार्थियों की योग्यता का मूल्यांकन समय-समय पर जिला कलक्टर या संभागीय आयुक्त द्वारा या राज्य के मन्त्री व अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिये।
3. कुछ पंचायत क्षेत्रों में ट्राइसेम कार्यक्रम में सम्मिलित उद्योग में प्रशिक्षण लेने के इच्छुक युवा नहीं हैं परन्तु उन ग्रामों में कृषि व पशुपालन आधारित जीवन-यापन पर निर्भरता है। ऐसे क्षेत्रों में कृषि प्रशिक्षण केन्द्र एवं पशुपालन की दृष्टि से पशुओं की स्वास्थ्य रक्षा एवं उनसे अधिकतम आर्थिक उत्पादकता प्राप्त करने के बारे में प्रशिक्षण देना चाहिये।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि ट्राइसेम कार्यक्रम में कई विकृतियां भी हैं जिन्हें उपरोक्त सुझावों तथा अधिक कुशल नियंत्रण द्वारा दूर किया जा सकता है।। इससे एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी एवं अर्द्ध बेरोजगारी को कम करने में मदद मिलेगी वहां गरीबी को कम करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक परिसम्पत्तियों के सृजन से गांवों में सुदृढ़ आर्थिक आधार बनेगा। स्वरोजगार को बढ़ावा मिलेगा ही। हालांकि कुछ कमियां जरूर हैं लेकिन उन्हें दूर किया जा सकता है।

साले की होली,
बीकानेर (राजस्थान)

(पृष्ठ 6 का शेष)

गांधी का भी काफी जोर था, उन्हीं के शब्दों में "भारत का मोक्ष कुटीर उद्योग-धंधों के विकास व विस्तार में निहित है।" किंतु आधारभूत सुविधाओं के अभाव में किसी भी प्रकार की औद्योगिक इकाइयों के विकास की आशा नहीं की जा सकती। अतः गांवों में श्रम-प्रधान उद्योगों की स्थापना हेतु उपयुक्त आधारभूत ढांचे का सृजन किया जाना चाहिए।

ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर होने वाले पलायन को रोकने के लिए यह जरूरी है कि उनके जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य, पानी, बिजली, संचार, यातायात, मनोरंजन आदि की सुविधाएं गांवों में ही उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाये ताकि ग्रामीणों को शहरी रौनक व उसकी चकाचौंध आकर्षित नहीं कर सके।

उपरोक्त सुविधाओं के अतिरिक्त गांवों के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़े इसके लिए यह आवश्यक है कि गांवों में मुर्गी-पालन, मछली-पालन, पशु-पालन आदि की सुविधाएं बढ़ाई जाए। ग्रामीण उत्पादों पर आधारित उद्योगों को ग्रामीण क्षेत्रों में ही लगाया जाए — ताकि गांव के लोगों को गांव में ही रोजगार मिल जाए और गांवों की आय गांवों के विकास में ही लगे।

आज ग्रामीण क्षेत्रों का सामाजिक वातावरण वहां फैली गंदी राजनीति के कारण दूषित हो गया है। लोगों में आपसी एकता, सहिष्णुता व भाईचारे का स्थान अनेकता, कटुता व वर्ग संघर्ष ने ले लिया है। इसके मूल में गावों में व्याप्त गरीबी व असमानता भी है जिसने सहकारिता, सहयोग और भाई-चारे की भावना को समाप्त कर दिया है। यहां आर्थिक मूल्य प्रधान हो गये हैं — जिससे ग्रामीण जीवन में असुरक्षा की भावना व्याप्त हो गयी — जातिवाद और सम्प्रदायवाद ने लोगों के जीवन में जहर घोल रखा है। गांवों के आर्थिक विकास से स्वस्थ वातावरण का पुनः निर्माण संभव हो सकता है। गांव के बेकार लोगों को काम में व्यस्त करना और उनकी ऊर्जा को रचनात्मक कार्यों में लगाना जरूरी है। ऐसे कार्यों में लग जाने से ग्रामीणों का, ग्रामीण क्षेत्रों का तथा देश का आर्थिक विकास भी होगा और गांवों में स्वच्छ वातावरण का सृजन होगा। गांव के शिक्षित व जागरूक लोगों को इस दिशा में प्रयास करना चाहिए। ये व्यवस्थाएं निश्चय ही गांवों से शहरों की ओर होने वाले पलायन की प्रवृत्ति पर रोक लगाने में सक्षम हो सकती हैं। स्वयंसेवी संगठनों को गांवों के हित में पलायन को रोकने के लिए प्रभावी प्रयत्न करने चाहिए। सामूहिक प्रयास से ही ग्रामीण क्षेत्रों का विकास संभव किया जा सकता है। अतः हम कह सकते हैं कि ग्रामीण विकास ही शहरीकरण की समस्या का समाधान है।

ग्राम-पो.-जैतपुर,
थाना-बड़हिया,
जिला-मुंगेर, (बिहार)

ग्रामीण महिलाओं के लिए कुटीर उद्योग

✍डा. नीलमा कुंवर एवं अंजू खरे

कुटीर उद्योग अर्थात् वह उद्योग जो छोटे-छोटे स्तर पर या घर पर ही कम लागत पर शुरू किया जा सके। भारत की 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में ही निवास करती है। अतः देश की प्रगति तभी सम्भव है जब हम अपने विकास कार्य गांवों से शुरू करें। गांधी जी ने कहा था "भारत गांवों का देश है इसलिए गांवों में कुटीर उद्योगों की स्थापना के द्वारा ग्रामीण जनता लाभान्वित हो सकती है तथा बेरोजगारी, निर्धनता, शोषण आदि की समस्याओं को काफी हद तक दूर किया जा सकता है क्योंकि जिस रफ्तार से हमारे देश की जनसंख्या बढ़ रही है लाखों नवयुवक शिक्षित होते हुए भी बेकार घूम रहे हैं तथा हम कहने को मजबूर हैं कि "आज देश में ऐसी शिक्षा, डिग्री लेकर मांगों भिक्षा" तो इन समस्याओं का एक समाधान है और वह है कुटीर उद्योगों की स्थापना।

दूसरी महत्वपूर्ण बात है कि कुटीर उद्योगों के द्वारा ग्रामीण महिलायें घर पर बैठे ही काम कर सकती हैं, उन्हें कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती तथा घर बैठे अच्छी आय भी प्राप्त हो जाती है।

अतः मैं आपको पांच ऐसे कुटीर उद्योगों से परिचित करा रही हूं जिनके लिए आपको किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है तथा वह आप कम रुपयों से शुरू कर सकती हैं। यदि आप आर्थिक सहायता चाहती हैं तो वह आपको कॉपरेटिव संस्थाओं तथा बैंक द्वारा भी प्रदान की जाती है तथा इसके साथ-साथ सरकार अन्य सुविधायें भी देती है।

इसमें सबसे पहला उद्योग है टाई एण्ड डाई। आजकल इसका काफी फैशन है तथा शहरों में भी काफी मांग है। यह थोड़ा महीन काम है जिसे गांव की महिलायें तथा स्त्रियां अच्छे तरीके से कर सकती हैं।

1. उद्योग–टाई एण्ड डाई

सामग्री – कपड़ा रंगने वाला रंग, नमक, फिटकरी (चमक लाने के लिए) कपड़ा जो आपको रंगना है। धागा, मटर छोला, दाल जो भी आप कपड़े पर बांधना चाहती हैं।

सर्वप्रथम कपड़े पर पेन्सिल या चाक से डिजाइन बना लें फिर उसके ऊपर मटर, दाल या जो भी आप बांधना चाहती हैं उसे मजबूत धागे से कस कर बांध लें। कपड़े के हिसाब से पानी लेकर उसे गर्म कर लें तथा दूसरे बर्तन में ठण्डे पानी में एक दो चम्मच रंग आवश्यकतानुसार घोल लें और गर्म पानी में मिला लें। अब नमक मिलाकर चला दें। फिर फिटकरी को कपड़े में बांधकर चला दें। रंग की तीव्रता को किसी पुराने कपड़े पर देख लें, फिर कपड़ा रंगें। यदि आप कपड़े के रंग को और पक्का करना चाहती हैं तो एक दो चम्मच डाई फिक्सर जो बाजार में मिलता है सादे पानी में घोलकर कपड़ा उसमें डालकर निकाल लें। वैसे नमक भी इसीलिये डाला जाता है। अब यदि आप कपड़े को एक रंग में रंगना चाहती हैं तो रंगे हुए कपड़े को सूख जाने दें, उस पर फिर से दाल आदि बांधे तथा दूसरा रंग बना कर रंग लें। हां एक बात का ध्यान रखें, दूसरे रंग में रंगते समय पहली बार बांधी गयी गांठें न खोलें। कपड़ा सूखने के पश्चात गांठें खोल दें। इस प्रकार एक डिजाइन तैयार है।

2. मिट्टी के बर्तनों की रंगाई

सामग्री – मिट्टी के बर्तन, पेंट, ब्रुश, पानी, बाल्टी।

चित्रकारी के लिए सामग्री - सफेदी, प्लास्टर आफ पेरिस, खड़िया का चूरा व वार्निश।

सर्वप्रथम मिट्टी के बर्तन को किसी कपड़े से पोंछकर साफ कर लें। फिर यदि उस पर चित्रकारी करना चाहें तो ऊपर लिखी चित्रकारी की सामग्री को निम्न प्रकार से मिलायें :

प्लास्टर आफ पेरिस	-	दो भाग
खड़िया का चूरा	-	एक भाग

दोनों को अच्छी तरह मिलाकर वार्निश से आटे की तरह गूथें।

सने हुए मिश्रण के आधे भाग के बराबर सफेदा मिला लें। अब आप इस मिश्रण से जिस भी तरह की चित्रकारी जैसे फूल पत्ती आदि बना सकते हैं। फिर बनी हुई चित्रकारी को गोंद या फेविकोल द्वारा बर्तन पर चिपका दें। अब इस बर्तन को थोड़ी देर सूखने दें।

सूख जाने के बाद पूरे बर्तन को किसी एक रंग में रंग दें। फिर यदि चाहें तो ब्रुश द्वारा ही अन्य रंगों से उस पर मनचाहा रंग कर सकती हैं। पर यदि आप किसी कारणवश ब्रुश से रंग करने में असमर्थ हों तो एक बाल्टी में आधी बाल्टी पानी भर लें। अब इसमें चारों ओर घुमाते हुए रंग या पेन्ट डालें। अब इस बाल्टी में बर्तन डालकर चारों ओर गोल घुमायें। इस प्रकार उस पर रंग अपने आप चढ़ जायेगा। फिर इसे उठाकर किसी उचित स्थान पर, जहां पर उसको कोई नुकसान न हो, सूखने रख दें। जब यह सूख जाये तब आप अपने बर्तन को तैयार समझें।

3. कपड़े के ऊपर छपाई

सामग्री- कपड़ा (जिस पर छपाई करना है) टेक्सटाइल रंग, फिक्सर, बाइन्डर, यूरिया, पुराना कपड़ा, बिछाने के लिए ब्लाक, फोम।

विधि- किसी भी कपड़े के ऊपर छपाई से पहले हम आवश्यक सामग्री को तैयार करेंगे तथा उसके बाद रंग को तैयार करेंगे। रंग को तैयार करने के लिए पहले टेक्सटाइल रंग को तैयार करेंगे। टेक्सटाइल रंग, फिक्सर तथा बाइन्डर को विभिन्न अनुपात (1 : 1 : 2) में मिला देंगे। अब इस मिश्रण में आधा चम्मच यूरिया घोलेंगे। इस घोल को फोम के ऊपर डाल देते हैं। जितना बड़ा ब्लाक हो उतनी ही जगह में रंग डालेंगे। उसके बाद एक पुराना कपड़ा नीचे बिछाकर उसके ऊपर जिस कपड़े पर छपाई करनी है, उसे बिछायेंगे। अब ब्लाक में फोम से रंग लेकर छपाई करेंगे।

सावधानियां

1. कपड़े का स्टार्च धोकर निकाल लेंगे।
2. छपाई करते समय रंग के धब्बों से कपड़े को बचाना चाहिए अन्यथा रंग नहीं छूटेगा।
3. छपे हुए प्रिन्ट को तुरन्त नहीं छूना चाहिए।
4. 24 घण्टे बाद कपड़े को उल्टा करके प्रेस कर लेना चाहिए।

4. मुर्गी पालन

मुर्गियां तीन श्रेणियों में विभाजित की जा सकती हैं।

(1) अंडों के लिए (2) चूजों के लिए (3) मीट के लिए

इस उद्योग को शुरू करने के लिए सबसे जरूरी चीज है जगह, जिसमें मुर्गियां रखी जायेंगी, उनके खाने व पानी पीने का बर्तन उनके रख-रखाव की वस्तुएं जैसे बोरे, घास, दाना पानी आदि।

इस उद्योग को शुरू करने में कम से कम 8000 रुपये की आवश्यकता होती है। कम से कम एक साल के बाद लगायी गयी संपूर्ण धनराशि उसे वापस मिल जाती है और उसका फार्म मुर्गी अण्डे को बेच कर लाये गये पैसों से चलता है।

इस उद्योग को लगाने से सरकार और अन्य सहकारी संस्थाओं के द्वारा अनुदान मिलते हैं जिसमें कि निम्न जाति वाले लोगों को 40-45 प्रतिशत की छूट मिलती है और बाकी कम ब्याज पर लौटाना पड़ता है।

यह एक सरल एवं आर्थिक दृष्टि से लाभकारी उद्योग है और ग्रामीण महिलाएं अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सकती हैं।

4. मोम उद्योग

सामग्री-आधा किलोग्राम मोम खिलौने के अनुसार लगाने के लिए तेल और मनचाहे आकार का सांचा, डोरा।

विधि- सर्वप्रथम मोम को पिघला लीजिये, खिलौने में तेल लगा लीजिए व उसमें पूरे में डोरा डाल दीजिए। पिघली हुई मोम को धीरे-धीरे सांचे में ढाल दीजिए और बिना हिलाये उसे जमने के लिए रख दें। जब जम जाये तो किसी धारदार वस्तु से जैसे कैंची या ब्लेड से काटकर निकाल दीजिए।

सावधानियां-पानी की बाल्टी हमेशा अपने पास रखें और हमेशा धारदार वस्तु से ही काटें।

इस प्रकार आपने देखा कि इस तरह के उद्योग बिना किसी ज्यादा आर्थिक सहायता या थोड़ी बहुत सहायता के द्वारा किए जा सकते हैं तथा घर बैठे ही आप अच्छी आय प्राप्त कर सकती हैं।

सहायक प्राध्यापक,
चन्द्रशेखर आजाद,
कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय,
कानपुर-2

बिहार में सुखाड़ और बाढ़ की अंतहीन कथा

✍डॉ. देवनारायण महतो

ऋग्वेद की ऋचाओं से लेकर आधुनिक - पौराणिक साहित्यों तक सर्वत्र जल एवं जल की संवाहिका नदियों की असीम महिमा का गुणगान देखा जा सकता है। जल प्राणिमात्र के लिए संजीवनी है, परंतु इस सच से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि जल मौत का कारण भी बन जाता है। कहीं सूखे के रूप में त्राहि - त्राहि मचाता है तो कहीं बाढ़ के रूप में प्रलय। प्राकृतिक विपदाओं के विविध स्वरूपों में सुखाड़ और बाढ़ एक ही सिक्के के दो पहलू हैं जो अभिशाप बनकर आती है, मौत बनकर छा जाती है।

वैसे तो भारत का लगभग एक तिहाई भाग अक्सर सुखाड़ की चपेट में रहता है तो कुल भौगोलिक क्षेत्र का आठवां हिस्सा बाढ़ से प्रभावित होता है। परंतु इनकी वीभत्स तस्वीर अगर देखनी है तो हमें उस प्रदेश की ओर चलना होगा, जहां एक ओर सुखाड़ के खूनी पंजों ने धरती की छाती को छलनी कर दिया, मानव और पशुओं को कंकाल का ढांचा बना दिया एवं समस्त वनस्पतियों को झुलसाकर नंगा कर दिया। वहीं दूसरी ओर प्रलयकारी बाढ़ की धारदार मार ने हजारों गांवों में कोहराम मचा दिया। धरती की कोख उजड़ गई। लाखों लोग बेघर हो गये। कितनी ही ललनाओं की मांग सूनी हो गई। सैकड़ों पशुधन देखते ही देखते काल के गाल में समा गये। यह सब किसी परीलोक की कथा नहीं, अपनी ही धरती के एक राज्य बिहार की हकीकत है।

भारत के मानचित्र पर असीम प्राकृतिक सम्पदाओं और खनिज भंडारों का मालिक बिहार की फटेहाल अर्थव्यवस्था में आज भी कृषि की प्रधानता है। राज्य की 80 प्रतिशत से भी अधिक भूमि पर कृषि की जाती है, जिस पर यहां की 86 प्रतिशत जनसंख्या आश्रित है। परंतु यह दुर्भाग्य का विषय है कि समस्त उत्तर बिहार की अपेक्षाकृत अधिक उपजाऊ भूमि हमेशा बाढ़ के प्रकोप का शिकार होती रहती है। अरबों रुपये की सम्पत्ति घर-बार, जान-माल और फसल बाढ़ से प्रत्येक वर्ष नष्ट हो जाते हैं। मध्य बिहार की उर्वर भूमि और दक्षिण बिहार की अपेक्षाकृत कम उपजाऊ भूमि प्रायः भयंकर सूखे की चपेट में रहती है। इस प्रकार सम्पूर्ण बिहार सूखे और बाढ़ की दोहरी मार से कराह रहा है।

राष्ट्रीय बाढ़ आयोग ने भी यह तथ्य स्वीकार किया है कि बिहार भारत का सर्वाधिक बाढ़ प्रभावित राज्य है। पूरे देश में जहां 400 लाख हेक्टेयर क्षेत्र बाढ़ से प्रभावित होता है, वहीं अकेले बिहार में 64.61 लाख हेक्टेयर जो देश के कुल बाढ़ प्रभावित क्षेत्र का 16 प्रतिशत और बिहार के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 37 प्रतिशत है। 1980 में आयोग ने अपने प्रतिवेदन में बतलाया कि बिहार में 42 लाख हेक्टेयर क्षेत्र मे बाढ़ की संभावना रहती हैं, परंतु बिहार सरकार ने विगत 25 वर्षों के आंकड़ों के आधार पर बाढ़ संभावित क्षेत्र 64 लाख हेक्टेयर बतलाया है। यहां बाढ़ की भयावह स्थिति का पता इससे भी चलता है कि देश की कुल बाढ़ प्रभावित आबादी का 56.5 प्रतिशत केवल बिहार में है।

दक्षिण बिहार का पलामू, गढ़वा और आस-पास का क्षेत्र पिछले कई साल से दुर्भिक्ष की त्रासदी झेल रहा है। इस साल जून में 165 मि. ली. सामान्य के विरुद्ध 198 मि. ली. वर्षा से मुर्झाये चेहरों पर खुशी की लहर दौड़ पड़ी थी। पिछली सुखाड़ की भरपाई के मद्देनजर निजी और सरकारी तौर पर काफी प्रशंसनीय पहल हुई। बढ़-चढ़ कर फसल लगाई गई परंतु जुलाई में 367 मि. ली. सामान्य के विरुद्ध मात्र 107 मि. ली. वर्षा हुई। फलतः करोड़ों रुपये की फसल नष्ट होने के कगार पर पहुंच गई। सम्पूर्ण गढ़वा जिले में धूल उड़ती रही। गिरिडीह और आस-पास के मजदूरों को पलायन करना पड़ा। गया, जहानाबाद, औरंगाबाद, नवादा और आस-पास पर पुनः अकाल का साया मंडरा रहा है। गोड्डा और उसके आस-पास के किसान कातर दृष्टि से आकाश की ओर देखकर सिहर उठते थे कि पुनः नरभक्षी अकाल का कहीं सामना न करना पड़े।

यह कितना बड़ा सच है कि एक ओर दक्षिण व मध्य बिहार लगातार भयंकर सूखे से त्रस्त थे तो दूसरी ओर समस्त उत्तरी-पूर्वी बिहार अनियंत्रित बाढ़ का शिकार था। 21 जुलाई की सुबह बागमती, गंडक, बूढ़ी गंडक, कमला-बलान तथा अधवारा समूह

की सभी छोटी-बड़ी नदियां बेलगाम हो गईं। जल प्रवाह की सारी प्रकृति प्रदत्त एवं मानव निर्मित्त प्रणालियां टें बोल गईं और देखते ही देखते सीतामढ़ी, पूर्वी चम्पारण, दरभंगा, मुजफ्फरपुर और मधुबनी आदि जिलों के सैकड़ों गांवों में उफनती जलधाराएं मौत बन गईं। लोग जान बचाने की खातिर छतों, छप्परों और वृक्षों पर चढ़ने लगे। अफरा-तफरी में घर-बार, खेत-खलिहान और माल-असबाब तो बह ही गये, कुछ माल मवेशी और बच्चे बूढ़े भी तेज धाराओं में समा जाने से न बचे।

आम तौर पर उत्तर बिहार के 16 जिले लगातार बाढ़ के अभिशाप से अभिशप्त होते रहे हैं। चम्पारण से लेकर भागलपुर-साहेबगंज तक हर साल बाढ़ आने से सारा कुछ हफ्तों, पखवारों जलमग्न रहना आम हो गया है। इस बार सीतामढ़ी में बागमती और पूर्वी चम्पारण में बूढ़ी गंडक की वेगवती धाराएं गांव के गांव लील गई हैं। गंडक, कमला-बलान और अधवारा समूह की नदियों ने दरभंगा, समस्तीपुर, मधुबनी और वासवर्ती जिलों को कम क्षति नहीं पहुंचाई हैं। 21 जुलाई के महाप्रलय से लोग अभी जूझ ही रहे थे कि 10 अगस्त को पुनः उत्तर बिहार एवं नेपाल के जल ग्रहण क्षेत्रों में भारी वर्षा से कोशी, कमला-बलान, भुतही बलान, गंडक, बूढ़ी गंडक, बागमती, अधवारा समूह, महानंदा, परमाल आदि नदियां बेलगाम हो गईं और सीतामढ़ी, पूर्वी चम्पारण, पश्चिमी चम्पारण, गोपाल गंज, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, समस्तीपुर, बेगूसराय, कटिहार, मधेपुरा, सहरसा, सुपौल, पूर्णिया, अररिया आदि 13 जिलों के सैंकड़ों गांव के लाखों लोगों पर कहर बरपा दी। कोसी तटबंध अनेक स्थानों से क्षतिग्रस्त हो गया।

21 जुलाई एवं 10 अगस्त की बाढ़ से उत्तर बिहार के कुल 13 जिलों के 45 लाख से भी अधिक लोग बाढ़ से प्रभावित हुए हैं और 300 करोड़ रुपये से अधिक की सम्पत्ति नष्ट हुई है। 40 लोग मौत के शिकार हुए हैं। प्रथम बाढ़ से राज्य के ऊर्जा विभाग, जल संसाधन विभाग मानव संसाधन विभाग, स्वास्थ्य विभाग एवं पथ निर्माण विभाग को क्रमशः 20 करोड़, 8 करोड़, 15 करोड़ और 90 करोड़ रुपये की क्षति हुई है।

कारण

लगातार सुखाड़ और बाढ़ की मार से त्रस्त बिहार के किसान-मजदूरों की विवश आंखों में यह सवाल तैर रहा है कि कब होगा इस अंतहीन कथा का अंत? पानी का असमान वितरण हर साल लाखों - करोड़ों लोगों के जीवन को प्रभावित करता है। क्या इसे ठीक से बांटकर इन लोगों के जीवन को खुशहाल नहीं बनाया जा सकता? बिहार के विशिष्ट संदर्भ में इस अंतहीन कथा का अंत खोजने के लिए हमें इनके अनेक कारणों की जांच करनी होगी।

साधारणतः सूखा और बाढ़ के उत्तरदायी कारक तो सभी प्रभावित क्षेत्रों में लगभग समान होते हैं किंतु किसी क्षेत्र विशेष में कुछ कारक भिन्न भी हो सकते हैं। बिहार में सूखे के लिए सामान्य के अतिरिक्त उत्तरदायी कारक निम्न हैं— (1) दक्षिण बिहार में पठारी जमीन होने के कारण नमी की कमी बनी रहती है एवं नहर तथा कृत्रिम साधनों द्वारा ऊंची - नीची भूमि में सिंचाई के पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं, (2) बेरहमी से प्राकृतिक वनों की कटाई की गई जिससे भूमि की नमी एवं पर्यावरण पर प्रतिकूल असर पड़ा है, (3) पथरीली जमीन होने के कारण पर्याप्त मात्रा में पेयजल की व्यवस्था नहीं की जा सकी है, (4) यहां कुछ बड़े पैमाने के उद्योग लगे हैं जो बेलगाम होकर प्रदूषण फैला रहे हैं। एवं (5) स्थलाकृति के अनुसार परम्परागत खेती से भिन्न फसल एवं अन्य रोजगार तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों का जाल नहीं बिछने से भी सूखे की मार बढ़ जाती है।

बिहार में बाढ़ के सामान्य कारकों के अतिरिक्त कुछ ऐसे कारक भी हैं जो इसे अन्य बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों से अलग करते हैं इनमें से प्रमुख निम्न हैं-

(1) उत्तर बिहार में बाढ़ एवं जल जमाव की समस्या नेपाल स्थित हिमालय पहाड़ से निकलने वाली नदियों के कारण है। स्पष्टतः बिहार को बाढ़ मूलतः "अंतर्राष्ट्रीय वरदान" के रूप में मिली है, (2) उत्तर बिहार की नदियां नेपाल से लायी मिट्टी और गाद से अपने तल को ऊंचा करती जा रही हैं। इस प्रकार नदी की जल बहाव क्षमता में निरंतर ह्रास हो रहा है। फलतः ये नदियां अपने किनारों को अप्रत्याशित रूप से काटती हैं और प्रायः अपनी धारा बदलती रहती हैं, (3) नदियों के किनारे पर जो भी तटबंध बनाये गये हैं उनसे तात्कालिक सुरक्षा तो मिली है पर जो गाद पूरे क्षेत्र में फैलती थी, अब तटबंधों के बीच ही जमा होती है। इससे तटबंधों को मजबूत एवं ऊंचा करना जरूरी है जो नहीं किया जा रहा है, (4) नदी- नालों पर बने रेल-पुल एवं सड़क पुल-पुलियों के जल-स्राव क्षेत्र को चौड़ा करना आवश्यक है जो अब तक नहीं किया गया है। और (5) तटबंधों एवं बांध की सुरक्षा के प्रति लोगों में चेतना की भारी कमी का होना और सभी बातों के लिए सिर्फ सरकार पर निर्भर रहना भी कम उत्तरदायी कारक नहीं हैं।

स्थायी समाधान के उपाय

सूखा और बाढ़ के कारणों की पड़ताल करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जब भी इनके स्थायी समाधान की बात उठती है तो हम इसे प्राकृतिक प्रकोप की संज्ञा देकर अपनी जिम्मेदारी से बचने की कोशिश करते हैं। प्रश्न उठता है कि क्या सूखे और बाढ़ का स्थायी समाधान संभव है? इस प्रश्न का उत्तर खोजने से पूर्व इसरायल, मिस्र और चीन की सफलताओं को याद करना प्रासंगिक एवं अनुकरणीय होगा। इसरायल और मिस्र ने अपने ठोस कार्यक्रमों के द्वारा अपने रेगिस्तान में हरित-क्रांति लाने का कीर्तिमान स्थापित किया है। चीन ने अपनी बेलगाम नदियों पर बड़े-बड़े बांध बनाकर तथा 10 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में सघन वन लगाकर बाढ़ और अकाल को बहुत हद तक नियंत्रित कर दिया। है। हम भी इनका स्थायी समाधान ढूंढ़कर इस अंतहीन कथा का अंत कर सकते हैं। आवश्यकता सिर्फ पक्का इरादा, ठोस कार्यक्रम एवं ईमानदार कोशिश की है। जितना जोर आज हम नई औद्योगिक नीति पर दे रहे हैं उतना अगर बाढ़ और सुखाड़ पर देते तो कृषि में क्रांति लाकर दुनिया के सामने एक प्रतिमान स्थापित करना असंभव न होता। परंपरागत तौर पर नदियों के तल की उड़ाही करना, तटबंधों की मरम्मत एवं ऊंचा करना, नये तटबंधों का विस्तार करना, नहरें निकालकर सिंचाई सुविधा का विस्तार करना एवं गांव-गांव में कृत्रिम साधनों से पर्याप्त पेयजल पहुंचाना तो समस्या के समाधान की दिशा में तात्कालिक उपाय हैं ही। परंतु स्थायी समाधान के लिए हमें इस प्रकार की योजना पर अमल करना होगा जो एक साथ सूखा और बाढ़ की समस्या का समाधान कर सके।

काफी पहले सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण की दो बड़ी योजनाएं बनी थीं। पहली के. एन. राव की "गंगा कावेरी राष्ट्रीय जल ग्रिड योजना" तथा दूसरी डी. जे. दस्तूर की "जलाहार योजना" थी। इस संदर्भ में बिहार और उत्तर प्रदेश के बाढ़ एवं सुखाड़ से प्रभावित क्षेत्रों में काम करने वाले राजनैतिक समूहों की एक कार्यशाला में एक नौजवान इंजीनियर राघवशरण द्वारा रखी गई। "नई गंगा पुरानी सरस्वती नहर योजना" काफी महत्वपूर्ण हो सकती है। इसके अनुसार बाढ़ का प्रकोप उत्तर भारत के पंजाब, हरियाणा, जम्मू-कश्मीर, उत्तर बिहार एवं पूर्वोत्तर राज्यों में होता है। सूखे की समस्या मुख्यतः राजस्थान-मालवा के साथ ही दक्षिण बिहार एवं पश्चिमी उड़ीसा में बनी रहती है। शेष भारत की समस्या उतनी गंभीर नहीं है। इस योजना के अनुसार उत्तर भारत और पूर्वी भारत की बाढ़ की समस्या का स्थायी समाधान एक नई गंगा नहर का निर्माण और पुरानी सरस्वती को जिंदा करना है। पुरानी सरस्वती उत्तर के अतिरिक्त जल को राजस्थान के रेगिस्तान में पहुंचाने के बाद बाकी जल को इलाहाबाद में लाकर गंगा में गिरा देगी। गंगा का पानी पटना से आगे जाकर ही जानलेवा रूप लेता है। इसके लिए त्रिवेणी और कलकत्ता के बीच चुनार पर बांध बनाकर नहर के जरिये गंगा का पानी फरक्का की तरफ मोड़ दिया जाए तो आगे बाढ़ का खतरा टल जायेगा। इस नई गंगा से बिहार के दक्षिण में तथा उड़ीसा में सिंचाई की जा सकती है और बाढ़ की समस्या का भी हल हो सकता है। इस योजना में चुनार के पास पानी को मात्र 150 मीटर चढ़ाना होगा। फिर वहां से गिरते पानी में कई जगह बांध बनाकर पनबिजली का भारी उत्पादन किया जा सकेगा। इसमें नई गंगा नहर और पुरानी सरस्वती नदी की लंबाई क्रमशः 480 किलोमीटर एवं 1280 किलोमीटर होगी और घाघरा, सरस्वती लिंक नहर की लंबाई 360 किलोमीटर होगी, जो पूर्ववर्ति योजनाओं से कम लंबी एवं मात्र आधी लागत से संभव है।

इसके अतिरिक्त उत्तर बिहार की सभी नदियों का उद्‌गम चूंकि नेपाल में है। अतः अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नेपाल सरकार के सहयोग से नदियों पर बांध एवं विद्युत परियोजना बनाकर चौतरफा लाभ उठाने के लिए केन्द्र सरकार को अविलम्ब पहल कर कार्रवाई शुरू करनी चाहिए।

निष्कर्ष तौर पर यह भी स्पष्ट करना होगा कि बिहार को सूखे और बाढ़ की निरंतर तबाही से बचाने के लिए तात्कालिक उपाय को जारी रखते हुए स्थायी समाधान की दिशा तय करनी ही होगी। साथ ही जनता को इन प्राकृतिक आपदाओं से बचने एवं निपटने के लिए सतर्क बनाना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। आज बिहार ही नहीं, सम्पूर्ण देश के किसान-मजदूर अपने क्षुब्ध हृदय और बंद जुबान से आक्रोश का इजहार कर रहे हैं। क्या हम यह आशा कर सकते हैं कि हमारी सरकार इन प्राकृतिक आपदाओं के स्थायी समाधान की दिशा में अविलम्ब कारगर कदम उठाएगी तथा इस अंतहीन सिलसिले को खत्म कर देगी।

द्वारा श्री इंद्र देव प्रसाद (ए.ई.),
सरिसतावाद रोड,
न्यूपारपुर, पटना - 1

कहानी

तपता सोना

डा० शीतांशु भारद्वाज

वैशाख महीने की भरपूर दोपहरी है। दूर-दूर तक बिखरे हुए सीढ़ीनुमा खेतों में गांव के स्त्री-पुरुष गेहूं की कटाई-मंडाई में लगे हुए हैं। इस बरस फसल अच्छी हुई है। जहां तक भी नजर जाती है, पीला-ही-पीला दिखाई दे रहा है।

कुणीधार गांव के डाकघर से अपनी तरक्की के आदेश लेकर भुवन सिमलीखेत गांव की ओर लौट रहे हैं। इन तीन बरसों में उनका इस क्षेत्र से कुछ अधिक ही लगाव हो आया है। यहां से जाने का उनका मन ही नहीं करता। गांव वालों की अपनत्व की पीड़ा उनके मन-प्राणों को कचोटती जा रही है।

इस ओर कुणीधार गांव है और उस ओर सिमलीखेत। भुवन इन्हीं दो पड़ोसी गांवों की सीमा-रेखा पर खड़े हैं। आज उन्हें पिछले बरसों की रह-रह कर याद आ रही है। बरस जो कठिन थे और उन्हें तपा-तपा कर कर्मठ बनाते रहे हैं।

भुवन बी. ए. तक पढ़े-लिखे हैं। बहुत भाग-दौड़ के बाद तीनेक बरस पहले उनकी नियुक्ति सिमलीखेत गांव में प्रौढ़ शिक्षक के पद पर हुई थी। काम मिलने पर उन्हें किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, याद कर आज भी वे कांप उठते हैं। उन्हें गांव में भेजा गया था जहां कोई शिक्षक टिक ही नहीं पा रहा था।

"काम थोड़ा-सा टेढ़ा जरूर है लेकिन तुम जैसे नवयुवक के लिए...।" जिला प्रौढ़ शिक्षाधिकारी ने उन्हें नियुक्ति-पत्र पकड़वाते हुए कहा था।

"जी, आपका आशीर्वाद साथ रहा तो...।" विनम्र हो आए भुवन संकोच में डूबने लगे थे।

"आशीर्वाद से अधिक ताकत आदमी के अपने व्यक्तित्व में हुआ करती है, भुवन! जाओ और अपने को तपा-तपा कर सोना बनो!" अधिकारी ने उनकी पीठ थपथपा दी थी।

जिला मुख्यालय से कड़े इरादे के साथ भुवन सिमलीखेत गांव की ओर जाने वाली बस में बैठ गए थे। वे दिखला देना चाहते थे कि नौकरी मिल जाने के बाद आज के युवक क्या-कुछ नहीं कर सकते! तमाम रास्ते भर वे भविष्य के मनसूबे बनाते रहे थे। बस बराबर पहाड़ी सर्पिल पथ पर दौड़ती रही थी।

दोपहर को भुवन क्षेत्र के खंड विकास अधिकारी के कार्यालय में आ पहुंचे थे। उनसे वे सिमलीखेत की भौगोलिक स्थिति और गांव वालों के स्वभाव की जानकारी चाहते थे।

"वो तो लठैतों का गांव है। हम भी वहां जाने से कतराया करते हैं। फिर भी...।" अधेड़ अवस्था के अधिकारी उन्हें वस्तु स्थिति से परिचित करवाने लगे थे।

भुवन तो साहसी थे। ब्लॉक से टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी पर चलते हुए वे पश्चिमी छोर पर बसे हुए सिमलीखेत गांव में आ गए थे। उस रात अपना परिचय देकर वे गांव के प्रधान के घर ठहरे थे। उनके आगमन की खबर गांव-जवार में हवा की तरह से फैलने लगी थी।

"यहां सिकिसा केंदर चलना मुश्किल है, मास्टर! पहले भी दो-तीन...!" गांव के प्रधान उन्हें निरुत्साहित करने लगे थे, "दो-तीन मास्टर पहले भी आए थे। पर वे लोग यहां से बैरंग ही लौट गए। यहां कायदा-कानून नहीं, लट्ठ चला करता है।"

"यानी कि जिसकी लाठी उसकी भैंस?" भुवन मुस्करा दिए थे।

"बिल्कुल ठीक!" प्रधान गंगासिंह की घनी सियाह मूंछों के बीच हंसी की उजास फैल आई थी।

दूसरे ही दिन भुवन गांव वालों की बैठक बुलवाने लगे थे। उसमें वे शिक्षा के महत्व की रुचि जगाने लगे थे। किंतु उनके सारे प्रयास व्यर्थ गए थे। उन मूर्खों के बीच उल्टे वही मूर्ख बनने लगे थे। पहली बार उन्हें लगा था जैसे कि वे यहां अंधों में काना राजा के समान हों।

"हुंह! कल का छोकरा हमीं को सिकिसा देने चला!" बड़े-बूढ़े नाक-भौं सिकोड़ने लगे थे।

"काका, कहो तो इसे हमीं सिकसा दे दें। ऐसा सिकिसा देंगे कि...।" झगडू लठैत ने अपनी लाठी ठोक कर कहा था।

"ना रे! सिरकारी आदमी है। सारा गांव बंध जाएगा! दो-चार दिन बाद खुद ही अपना बोरिया-बिस्तर उठा लेगा।" किसी बुजुर्ग ने उसका हाथ पकड़ लिया था।

भुवन भी पक्के इरादे के थे। वे किसी भी प्रकार घबराए नहीं। उनकी आंखों में जो सपना तिर रहा था, उसे वे पूरा करना चाहते थे।

* * *

दोपहरी का वन—कीट चीं-चिड़...चीं-चिड़ का राग अलापने लगा था। गहरी सांस खींच कर भुवन अपने आगे का रास्ता नापने लगे। आगे जाकर पीपल के पेड़ के नीचे उन्होंने आराम करना चाहा। उस पेड़ के साथ उनकी बहुत सारी पुरानी यादें जुड़ी हुई हैं।

* * *

तीनेक बरस पहले भुवन इसी पेड़ के नीचे बैठे हुए प्रौढ़ शिक्षा केंद्र पर विचार करते आ रहे थे। गांव-जवार में कोई भी तो उन्हें कमरा देने को तैयार नहीं हो पा रहा था।

"कहो हो मास्टर!" तभी न जाने किधर से उनके पास झगडू आ पहुंचा था। सिर का बोझ उतार कर वह उन्हीं के समीप आ बैठा था।

झगडू की उस उपस्थिति से भुवन आतंकित हो उठे थे। वह तो गांव का पहले दर्जे का लठैत है! फिर भी, किसी प्रकार उनके मुंह से निकला था, "ठीक हैं, ठाकुर! अब हम भी इस गांव से चल देंगे।"

"क्यों?"

"न गांव में कोई जगह देगा, न यहां शिक्षा केन्द्र खुलेगा।" उन्होंने उदास स्वर में कहा था।

"अरे, छोड़िए भी सिकिसा केंद्र को! लाओ, कोई बीड़ी-सीड़ी हो तो पिलाओ!" झगडू ने प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र में कोई रुचि नहीं दिखाई थी।

"मैं बीड़ी नहीं पीता, ठाकुर!" उन्होंने कहा था।

"नहीं पीता?"

"हां, यह दमा कर देती है।"

"अच्छा हो मास्टर!" कह कर झगडू ने सिर पर बोझा रख लिया था। उधर से वह ऊपर गांव की ओर हो लिया था।

सिमलीखेत का वह झगडू आस-पास के सारे गांवों में "वकील" के नाम से जाना जाता है। गांव में उसका रास्ता कोर्ट-कचहरी तक जाया करता है। वह चालीसेक बरस का हो आया था किंतु पढ़ने के नाम पर न उनके बाप-दादा ने पढ़ा था, न ही उसने! 'वह अंगूठाछाप आदमी है। ऐसे में भी वह नामी-गिरामी वकीलों के कान कुतर जाया करता है।' अपनी प्रशंसा वह कई बार अपने कानों सुन चुका था।

एक बार मुंसिफ की अदालत में हेड़ाधार गांव में हुई लूटपाट की सुनवाई चल रही थी। लूटपाट के माल के साथ सरकार को चांदी की दो हंसुलियां भी मिली थीं। प्रतिपक्ष का वकील तर्क-पर-तर्क देता हुआ बराबर यह सिद्ध करने की कोशिश कर रहा था कि वे हंसुलियां लूटपाट की नहीं है। वे तो प्रतिपक्षी की बहू की हैं।

"लेकिन माई-बाप! एक जनानी अपने गले मे एक साथ ही दो-दो हंसुलियो कैसे पहन सकती है?" गवाह बने हुए झगडू ने मुंसिफ की ओर तर्कभरा प्रश्न उछाल दिया था।

उस तर्क को सुन कर मुंसिफ की कुर्सी हिल उठी थी। प्रतिपक्षी वकील अपने माथे का पसीना पोंछने लगे थे। मामला बदलने लगा था। बाद में प्रतिपक्ष वालों को डकैती के जुर्म में एक-एक बरस की सजा हुई थी।

"अगर दो जमात भी पढ़ा हुआ होता तो पूरा बैरिस्टर होता, बैरिस्टर!" उनकी उस बुद्धि चातुरी पर किसी एक वकील ने कहा था।

"हां। ये तो पढ़े-लिखों के भी कान काट दिया करता है।" किसी दूसरे वकील ने टिप्पणी जड़ी थी।

बाद में उसी लठैत झगडू का हृदय परिवर्तित हो आया था। इस पर भुवन को आज भी आश्चर्य होता है।

उस दिन अपने घर के आगे दाड़िम के पेड़ के नीचे बैठे हुए झगडू ने अपना बेटा भेज कर भुवन को अपने पास बुलवा लिया था। उनके लिए उसने दालान में खाट पर दरी बिछा दी थी।

"तंबाकू तो नहीं लेते न मास्टर?" उसने पूछा था।

"नहीं! बताया न कि में कोई नशा नहीं करता।"

"अच्छा हो मास्टर! इस सिकिसा केंदर से क्या फैदा होगा?"

झगड़ू एकाएक प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र में रुचि लेने लगा था।

"इसके फायदे-ही-फायदे हैं, ठाकुर! अपनी चिट्ठी-पतरी बांचना...। रामायण-महाभारत पढ़ना...।" भुवन को लगने लगा था जैसे कि उसका सपना पूरा होने लगा हो!

"हूं!" चिलम गुड़गुड़ाता हुआ झगड़ू कुछ गहरे सोच-विचारों में डूबने लगा था।

"फिर क्या कहते हो, ठाकुर?" भुवन उसे फिर से याद दिलाने लगे थे।

"भले काम के लिए हम तुम्हारे साथ हैं, मास्टर! हमारा ऊपर वाला जो मकान है न, वह तुम्हारे ही हवाले हैं।" झगड़ू महादानी बन बैठा था।

और, तब भुवन की खुशी का कोई ओर-छोर न रहा था। अपने काम मे वे सफल हो आए थे। यह समाचार जब उन्होंने जिला मुख्यालय को भेजा था तो उन्हें अधिकारियों की ओर से ढेर सारी बधाई मिली थी।

तीन वर्ष के उस साक्षरता-अभियान में भुवन ने आधे से भी अधिक ग्रामीणों का साक्षर बना लिया है। निरक्षर झगड़ू इस वर्ष गांव पंचायत का प्रधान है। अब वह साक्षर ही नहीं, पंचायत के नियमों और पंचायती अखबार को भी पढ़ने लगा है। कभी-कभी तो वह पंचायतराज सेक्रेटरी के हाथ से कलम लेकर स्वयं ही पंचायत के फैसले लिखने लगता है।

सारे सिमलीखेत में झगड़ू ही एक अकेला आदमी है जो भुवन को सच्चे मन से प्यार किया करता है। पिछले वर्ष जब भुवन की बदली के आदेश आए थे तो वह जिला अधिकारियों मे मिल कर उन्हें रद्द करवा आया था।

*   *   *

"कहो हो मास्टर!" झगड़ू की उपस्थिति से भुवन चौंक उठे। अतीत से कट कर वे वर्तमान में लौट आए।

"ठीक हैं, ठाकुर साहब!" भुवन ठीक से बैठ गए।

"तो तुम सचमुच में जा रहे हो?" झगड़ू को उनकी बदली का समाचार पहले से ही मिल चुका था।

"क्या करें, ठाकुर साहब! तरक्की का मामला है न!" भुवन अपनी विवशता जतलाने लगे।

"ठीक है। जाना भी चाहिए।" झगड़ू की आंखों में नमी भर आई, "पर कभी-कभी इस ओर भी...। हम लोगों को...।"

"इस गांव को मैं कैसे भुला सकता हूं, ठाकुर साहब?" भुवन को भी तो गांव छोड़ने पर अपार दुख हो रहा था, यह तो मेरी कर्मभूमि रही है।

दोनों जने वहां से ऊपर गांव की पगडंडी पर हो लिए।

"गांव पंचायत आज शाम आपको विदाई-भोज दे रही है।" राह चलते हुए झगड़ू ने कहा।

"इसकी क्या जरूरत है, ठाकुर साहब।"

"जरूरत है, मास्टर।" जिस गांव का आपने कायाकल्प किया हो, क्या वह इतना भी नहीं कर सकता? झगड़ू ने कहा, इससे आप हमें याद तो करेंगे।

"ये सब आपकी ही बदौलत हुआ है," ठाकुर साहब! भुवन ने विनम्रतापूर्वक कहा, "मैं तो केवल कारण भर हूं।"

दोनों आपस में बतियाते हुए ऊपर गांव में चल दिए।

सिमलीखेत गांव के पंचायत-घर के आंगन में खूब चहल-पहल है। ग्रामीण लोग नीचे दरी पर बैठे हुए हैं। सामने एक छोटा-सा मंच बना हुआ है। वहां भुवन और झगड़ू एक ही आसन पर बैठे हुए हैं।

विदाई की कार्यवाही आरंभ हो गई। स्वयं ग्राम प्रधान झगड़ू ने भुवन को दिए गए मान-पत्र को पढ़ा। भुवन पुष्पहारों से लदने लगे। सभी तो उनके प्रति अपने प्रेम का प्रदर्शन कर रहे थे। हर कोई ही तो उनका गुण-गान कर रहा था। यह सब देख-सुन कर वे इतने भाव विभोर हो आए कि उनके गले से दो शब्द तक नहीं निकल पा रहे थे। बहुत कठिनाई से सिर झुका कर उन्होंने ग्रामीणों का आभार प्रकट किया। उनका गला रुंध आया।

और, दूसरे दिन जिला मुख्यालय की ओर जाते हुए भुवन जैसे अपने आप में नहीं थे उनके पांव तो आगे बढ़ रहे थे लेकिन मन सिमलीखेत के लिए भटक रहा था। उनकी समझ में नहीं आ पा रहा था कि इस बीच वे अधिक तपे हैं या कि झगड़ू लठैत?

138, विद्या विहार,
पिलानी-राज. 333031

अमरीकन लड़की का भारत के गांव से लगाव

✍एस. पी. मित्तल

एंड्रिया पैरी नाम है एक 20 वर्षीय अमरीकन लड़की का जो भारत दर्शन के लिये जुलाई 1992 में एक ग्रुप के साथ आई थी। ग्रुप के बाकी सदस्यों की तरह उसके मन में भी जिज्ञासा थी कि वह थोड़े समय में भारत और खास तौर से इसके गांवों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करे। प्रारंभ में यह ग्रुप चंडीगढ़ आया तथा इनके नेता ने जो एक भारतीय मूल के हैं, मेरे साथ संपर्क स्थापित किया। सभी सदस्यों की इच्छा थी कि वे भारत दर्शन के साथ-साथ कुछ ऐसे कार्य तथा परियोजनायें भी देखें जिसमें गांव के लोगों को उन्नति के अतिरिक्त पर्यावरण, विकास और वनों से संबंधित जांनकारी भी प्राप्त हो।

मेरा संबंध सुखोमाजरी गांव, जो कि पिंजोर (जिला अम्बाला) से चार कि. मी. दूर नालागढ़ सड़क पर स्थित है, से लगभग 18 वर्षों से रहा है। यह गांव चहुंमुखी विकास का एक जगत विख्यात उदाहरण है। मैं इस ग्रुप को एक दिन इस गांव ले गया। सभी के मन में भारत के गांवों की बड़ी अजीब सी तस्वीर थी। मगर इस गांव में घुसते ही सभी लोग चकित रह गये। चारों तरफ दो व तीन मंजिले पक्के मकान। कई मकानों पर टेलीवीजन के एनटीना, एक-एक घर में चार-चार भैसें। भैंसों की सेहत देखकर सब दंग रह गये। यह गांव उनके मन में बैठी तस्वीर के बिलकुल विपरीत था। मैंने उन्हें बताया किं आज से लगभग 15 साल पहले इस गांव की हालत क्या थी। सब मकान कच्चे थे। जहां आज भैंसे बंधी हुई हैं वहां पर बड़ी तादाद में बकरी बंधा करती थीं। लोगों के पास दो वक्त का खाना नहीं था। ये जंगलों पर निर्भर थे। पेड़ काट कर लकड़ी बेच कर अपना निर्वाह करते थे। बकरियों को जंगल में चराया करते थे। इन सब का परिणाम यह हुआ कि जंगल धीरे-धीरे खतम हो गये और इनकी गरीबी बढ़ती गई। इनके पास थोड़ी-थोड़ी जमीन थी मगर पानी के अभाव से पैदावार लगभग न के बराबर होती थी। सबके मुख पर एक ही प्रश्न था कि यह काया पलट हुई कैसे?

मैंने उन्हें विस्तार से बताया कि यह सब वर्षा जल के संभारण एवं एकत्रित जल के सदुपयोग से संभव हुआ। इसके लिये हमने एक 12 मीटर ऊंचा मिट्टी का बांध पहाड़ों की तलहटी में बनवाया और वहां से भूमिगत पाइप लाइनों द्वारा एकत्रित वर्षा जल को खेतों तक पहुंचाया। पहले जहां गेहूं की फसल लेना लगभग असम्भव था वहां अब दो या तीन पानी देने से इसकी पैदावार लगभग 3000 कि. ग्राम प्रति हेक्टेयर होने लगी है। फिर हमने गांव वालों को समझाया कि यदि वे जंगल काटते रहे और बकरियां चराते रहे तो जो जलाशय हमने बनाया है वह कुछ ही दिनों में मिट्टी से भर जायेगा। तत्पश्चात् उनको खेती के लिये पानी नहीं मिलेगा। यह सुन कर गांव वाले घबरा गये और बोले कि उन्हें पानी चाहिये चूंकि इसी से उनके खेतों में पैदावार होने लगी थी। हमने सब गांव को इकट्ठा किया और समझाया कि आप लोग पेड़ काटना और बकरी चराना तुरंत बंद करें और अपना समय खेती-बाड़ी में लगायें। यह बात उन लोगों की समझ में आ गई और धीरे-धीरे जंगल फिर हरा भरा होने लगा। घास की पैदावार लगभग 20 गुना बढ़ गई। जहां लगभग सभी पेड़ खतम हो गये थे आज हजारों की संख्या में पेड़-पौधे नजर आते हैं। यह सब संभव हुआ गांव वालों की मदद और योगदान से। वास्तव में 'वर्षा जल' ने उनकी विचारधारा बदलने में सहयोग दिया। अब वहां इतना अनाज पैदा होता है कि वे अपनी जरूरत पूरी करने के बाद बेच भी लेते हैं। चारा व घास समुचित मात्रा में मिलने से सभी ने धीरे-धीरे बकरियां बेच दीं और भैंसे रख लीं। इससे दूध का व्यापार उनकी आमदनी का मुख्य कारण बन गया। अब लगभग एक हजार लीटर दूध प्रतिदिन इस गांव से बिकने बाहर जाता है।

यूं तो ग्रुप के सभी सदस्य यह सब उन्नति देखकर बहुत ही प्रभावित हुए परंतु एंड्रिया कुछ ज्यादा ही प्रभावित हुई। उसने फैसला किया कि वह कुछ दिन और भारत में रहेगी तथा सुखोमाजरी गांव के वातावरण तथा गांव वालों के रहन-सहन एवं खान-पान का गहराई से अध्ययन करेगी। उसने इस काम के लिये मुझ से मदद मांगी और कहा कि क्या मैं उसके रहने का प्रबंध गांव में ही करा सकता हूं। यह सुन कर मैं थोड़ा

सकपकाया। मन में सोचा कि एक लड़की जो विश्व के सबसे अमीर व खुशहाल देश की रहने वाली है और जिसे सभी ऐशो आराम उपलब्ध हैं वो भला गांव में कैसे रहेगी। यहां कोई भी सुविधा उपलब्ध नहीं है। परंतु वह अपने निश्चय पर अडिग थी और बार-बार मुझसे विनती की कि मैं उसके रहने का प्रबंध गांव के किसी परिवार के साथ करा दूं। मैं बड़े असमंजस में पड़ गया।

भाग्यवश गांव में प्रकाश नाम का एक ऐसा व्यक्ति मिल गया जो थोड़ी बहुत अंग्रेजी बोल लेता था। मैंने प्रकाश को एंड्रिया की इच्छा बताई। मेरे कहने पर उसने एंड्रिया को अपना अतिथि बनाना स्वीकार कर लिया। यद्यपि उसका घर छोटा था परंतु उसका और उसके परिवार वालों को दिल बहुत बड़ा। एंड्रिया ने कुछ ही दिनों में अपने आप को गांव के वातावरण में पूर्णतया ढाल लिया। वह परिवार के एक सदस्य की तरह रहने लगी। प्रकाश के तीनों बच्चों के साथ वह ऐसे घुल मिल गई कि जैसे वे एक दूसरे को वर्षों से जानते हों। यद्यपि इशारों में ही बातें होती थी मगर एंड्रिया को उनकी बातें समझने में देर नहीं लगती थी। जगह और चारपाई की तंगी की वजह से एंड्रिया को दो बच्चों को अपने साथ सुलाना पड़ता था। मगर यह सब उसको अच्छा लगता था।

धीरे-धीरे एंड्रिया की दोस्ती उसकी हम उम्र की लड़कियों से हो गई। फिर तो दिन और भी अच्छे से कटने लगे। ज्यादातर वार्तालाप 'यस' और 'नो' तक ही सीमित रहता था। अन्यथा इशारों में ही काम चलता था। एंड्रिया सुंदर व छोटे कद की थी और मुस्कराहट सदैव उसके मुख पर खेलती रहती थी। गांव की बूढ़ी औरतें उसके सिर पर हाथ रख कर आशीष देतीं तो बड़े-बूढ़े कहते कि इस लड़की को अकेले जंगल में नहीं जाने देना। जमाना बड़ा खराब है। एंड्रिया के लिये यह सब एक विचित्र प्रकार का अनुभव था। जब उसने गांव वालों को बताया कि वह अपने मां-बाप से सैंकड़ों मील दूर अकेली एक कमरा लेकर रहती है तो गांव वालों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने बताया कि वह अपनी पढ़ाई व खर्चे के लिए पैसे खुद कमाती है। गांव वालों को यह सुन कर विश्वास नहीं हुआ और कुछ तो कहने लगे कि कैसे हैं वहां के मां-बाप जो एक जवान लड़की को इस तरह अकेले छोड़ देते हैं।

इस सब मौज मस्ती के साथ-साथ एंड्रिया ने अपने विषय की ओर भी पूरा ध्यान दिया। जैसे उसकी जिंदगी खुशियों से भर रही थी उसी प्रकार उसकी डायरी भी जो कि वह रोजाना लिखती थी। उसने अपने कैमरे का भी पूरा लाभ उठाया। अपने इस अनुभव को उसने कैमरे में बंद कर लिया। ये तस्वीरें उसकी जिन्दगी की शायद सबसे कीमती धरोहर होंगी।

करीब दस दिन के बाद जब मैं उसे लेने गया तो चलने से पहले वह सभी घरों में औरतों व बच्चों से मिलने गई। सभी औरतों की आंखों में आंसू भर आए और इधर एंड्रिया भी अपने आंसू रोक न सकी।

सुखोमाजरी गांव से आने के बाद मैंने एंड्रिया से उसके अनुभवों के बारे में पूछा। मेरा तात्पर्य यह जानना था कि जो परियोजना हमने आज से 15 साल पहले शुरू की थी उसके बारे में उसके क्या विचार हैं। इसके उत्तर में उसने कहा :—

1. खेती के लिये पानी का प्रबंध करने से गांव की गरीबी दूर हो गई। जिस जमीन में पहले 5-7 क्विंटल अनाज पैदा होता था अब वहां 20-25 क्विंटल होता है।
2. पानी का बंटवारा गांव की एक सोसाइटी करती है। पानी का पैसा घंटों के हिसाब से देना होता है। मुख्य बात यह कि पानी के बंटवारे को लेकर गांव में आज तक कोई झगड़ा नहीं हुआ।
3. जंगल की सुरक्षा व देखभाल की जिम्मेदारी अब गांव वालों की है। यदि कोई जानवर जंगल में चरता हुआ पकड़ा गया तो सोसाइटी उस पर जुर्माना करती है।
4. जंगल की घास जो पहले ठेकेदार को बेच दी जाती थी अब गांव की सोसाइटी के नाम रहती है।
5. सोसाइटी का गांव में खाता है। जो पैसा पानी व घास के बेचने से मिलता है, जमा करा दिया जाता है।
6. सोसाइटी ने इस पैसे का उपयोग स्कूल की इमारत व सड़क बनाने में किया है।
7. आधे से ज्यादा घरों में टेलीविजन हैं तथा कई घरों में स्कूटर व मोटर साइकिल हैं। यह सब गांव की आर्थिक स्थिति के द्योतक हैं।
8. अब गांव की औरतों को अपना परिवार छोटा रखने की पूरी जानकारी है। लगभग 30 औरतों ने ऑपरेशन करा भी लिये हैं।

अंत में उसका कहना था कि उसने भारत के एक गांव में रह कर यह महसूस किया कि यहां के लोग कितने सीधे, सच्चे मिलनसार एवं मेहनती हैं। काश भारत के सभी गांवों में ऐसी ही खुशहाली हो।

केन्द्रीय भूमि एवं जल संरक्षण संस्था,
अनुसंधान केन्द्र, चंडीगढ़-160019

पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

✍प्रकाश जैन

स्थानीय संस्थाओं के शासन को संवैधानिक मान्यता देना देश के गणतंत्र बनने के बाद संभवतः सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि है। पंचायती राज व्यवस्था को लाना, देश में गांधी जी के स्वप्न को साकार करने, समाज के सबसे निचले स्तर के लोगों को आर्थिक दृष्टि से समृद्ध बनाने और राजनीतिक कार्यकलापों में उनका सहयोग प्राप्त करने का सबसे सशक्त माध्यम है।

लोकतांत्रिक गणराज्य की हमारी समृद्ध परंपरा विश्व में एकदम अनोखी है। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान हमारे नेता स्वतंत्र भारत के प्रशासन और विकास में जनता की भागीदारी के प्रति पूरी तरह सजग थे। गांधीजी ने कहा भी था "असली स्वराज कुछ लोगों के सत्ता प्राप्त करने से नहीं आएगा बल्कि यह सभी के द्वारा इसकी क्षमता हासिल करने से ही आ पाएगा।"

किसी भी देश के तेजी से विकास के लिए यह जरूरी है कि उस देश के ग्रामीण विकास को समुचित महत्व दिया जाय। हमारे देश की लगभग 75 प्रतिशत जनता गांवों में रहती है और इनमे से करीब आधी बहुत ही निर्धन परिस्थितियों में जीवन-यापन करती है। गांवों में शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा सुविधाओं तथा अन्य सेवाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं है। पंचायती राज व्यवस्था से इस दिशा में क्रांति आने की उम्मीद की जा सकती है।

पंचायती राज की परिकल्पना नई नहीं है। भारत में पंचायतों का इतिहास काफी पुराना है। सही तो ज्ञात नहीं है लेकिन आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच पांड्यों के समय के दौरान ग्राम सभाओं का उल्लेख मिलता है। ग्राम सभा या परिषद के नाम से जानी जाने वाली इन सभाओं में गांवों की समस्याओं और कल्याण कार्यों पर गंभीरता से विचार किया जाता था। ब्रिटिश सरकार ने अपने राजनीतिक नियंत्रण को मजबूती प्रदान करने के लिए जो विभिन्न उपाय किए, उनमें पंचायतों का पुनर्गठन प्रमुख है। 1919 का बंगाल ग्राम स्वशासन अधिनियम, 1935 का पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम आदि इसी दिशा में किए गए उदाहरण हैं। लेकिन उन पंचायतों को लोकतांत्रिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि अधिकांश सदस्य सरकार द्वारा मनोनीत किए जाते थे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने पंचायतों को जनता की संस्थाएं बनाने के लिए इनमें काफी रुचि ली। पंचायती राज गठन के लिए महात्माजी के आदर्शों को मूर्त रूप देने का संकल्प लिया कि "आजादी सबसे निचले स्तर से ही शुरू होनी चाहिए। इस प्रकार हर गांव एक गणराज्य या पंचायत होगा जिसे सभी प्रकार के अधिकार होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि हर गांव को आत्मनिर्भर बनाना होगा, उसे अपने काम खुद करने के काबिल बनना होगा, इतना समर्थ बनना होगा कि सारी दुनिया खिलाफ होने पर भी वह अपनी रक्षा खुद कर सके।"

स्वतंत्रता के बाद प्रांत से निचले स्तरों पर लोकतंत्र की स्थापना का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण रहा है। संविधान निर्माताओं ने देश की आने वाली सरकारों के लिए राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों को संविधान में शामिल करके व्यवस्था की कि "राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें पंचायत शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।" इस तरह पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण स्तर पर लोगों को अपनी उन्नति और विकास प्रक्रिया में स्वतंत्र रूप से भाग लेने की शक्ति तथा दायित्व सौंपा गया।

राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों को अमली जामा पहनाने के लिए 2 अक्तूबर, 1952 को शुरू किए गए सामुदायिक विकास कार्यक्रम की समीक्षा और कमियां दूर करने के सुझाव देने के लिए बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया। इस समिति ने तीन स्तर वाली स्थानीय सरकार प्रणाली की सिफारिश की जिसे पं. जवाहरलाल नेहरू ने 'पंचायती राज' का नाम दिया। बाद में अशोक मेहता समिति, जी. वी. के. राव समिति तथा अन्य समितियों ने समय समय पर अनेक सुझाव दिए और

पंचायती राज संस्थाओं का विभिन्न राज्यों के गावों में गठन हुआ।

1988 के अंत तक देश में 2,17,300 ग्राम पंचायतें थीं। ये पंचायतें लगभग 5,79,000 गांवों में कुल के 95 प्रतिशत और देश की ग्रामीण आबादी के 92 प्रतिशत भाग में थीं। औसतन 48 ग्राम पंचायतों पर एक पंचायत समिति होती है और प्रत्येक जिला परिषद में 13 से 14 पंचायत समितियां और लगभग 600 ग्राम पंचायतें होती हैं।

साधारणतः यह देखा गया है कि देश की सिविल सेवा में उत्कृष्ट प्रशासनिक तथा बौद्धिक क्षमता के लोगों का चुनाव किया जाता है लेकिन निचले स्तर पर प्रशासनिक अकुशलता तथा गैर-जिम्मेदाराना रवैया अपनाया जाता है। स्वर्गीय राजीव गांधी ने इन्हीं मुद्दों को ध्यान में रखते हुए स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था में विशेष रुचि दिखाई। उन्होंने महसूस किया जब तक गांवों में पंचायतों को ग्रामीण विकास की जिम्मेदारी नहीं सौंपी जाती और गांवों के विकास कार्य में वहां के लोगों को भागीदार नहीं बनाया जाता, देश में सही अर्थों में विकास नहीं हो सकता। उन्होंने उत्साह और संकल्प के साथ पंचायती राज संस्थाओं के कार्य की समीक्षा के लिए पहल की। उनके लिए पंचायती राज मात्र राजनीतिक प्रक्रिया नहीं थी बल्कि सामाजिक आर्थिक परिवर्तन विशेष रूप से समाज के गरीब तथा कमजोर वर्गों के लोगों के जीवन में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम था। इसी से प्रेरित होकर उन्होंने पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक जामा पहनाने के लिए 64वां संविधान संशोधन विधेयक रखा। इसे लोकसभा ने तो पास कर दिया लेकिन राज्यसभा में यह पास नहीं हो पाया। संसद भंग होने के कारण यह विधेयक रद्द हो गया। इसके बाद सत्ता संभालने वाली विश्वनाथ प्रताप सिंह की राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 1990 में विधेयक में परिवर्तन करके इसे फिर पेश किया लेकिन सफलता नहीं मिली।

नरसिम्ह राव सरकार ने 1991 के आम चुनावों के बाद 72वां संविधान संशोधन विधेयक, 1991 उसी वर्ष सितम्बर में लोकसभा में पेश किया और उसे व्यापक विचार-विमर्श के लिए संसद की संयुक्त समिति को सौंप दिया गया। समिति की रिपोर्ट के आधार पर लोकसभा ने इस विधेयक को 22 सितम्बर, 1992 और राज्यसभा ने उससे अगले दिन इसे पास कर दिया। आधे से अधिक राज्यों के विधानमंडलों द्वारा इसका अनुमोदन करने के बाद राष्ट्रपति ने 20 अप्रैल, 1993 को विधेयक को मंजूरी दी और एक अधिसूचना के जरिए 24 अप्रैल, 1993 को 73वां संविधान संशोधन कानून बन गया। इस कानून से पंचायतों को अधिकारों का हस्तान्तरण एक संवैधानिक जिम्मेदारी बन गई है। अब न तो पंचायतों को लोकतांत्रिक कार्यकलापों से दूर रखा जा सकेगा और न ही उन्हें मनमाने ढंग से स्थगित किया जा सकेगा। उनके अधिकार और दायित्व निश्चित होंगे और वे विकास योजनाओं को सही ढंग से कार्यान्वित कर सकें इसके लिए स्वतंत्र वित्तीय व्यवस्था की गई है। ये संवैधानिक परिवर्तन देश के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के इतिहास में चमत्कारी साबित होंगे।

पंचायती राज संशोधन अधिनियम की खास-खास बातें इस प्रकार हैं :-

1. ग्राम सभा एक ऐसी संस्था होगी जिसमें पंचायत क्षेत्र के अंतर्गत सभी वयस्क व्यक्ति शामिल होंगे।
2. पंचायत प्रणाली तीन स्तर वाली होगी - ग्रामीण स्तर, मध्यवर्ती स्तर और जिला स्तर। बीस लाख से कम आबादी वाले राज्य, मध्यवर्ती स्तर की पंचायतों के गठन करने या न करने का फैसला स्वयं करेंगे।
3. तीनों स्तरों की पंचायती संस्थाओं के लिए सीधे चुनाव होंगे। ग्राम पंचायतों के सरपंच मध्यवर्ती स्तर की पंचायती संस्थाओं के सदस्य बन सकेंगे और मध्यवर्ती पंचायतों के प्रधान जिला स्तर की संस्थाओं के सदस्य बन सकेंगे।
4. सभी पंचायतों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में स्थान आरक्षित होंगे। कुल की एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी।
5. प्रत्येक राज्य में सभी स्तर की पंचायती संस्थाओं के अध्यक्षों के पद अनुसूचित जातियों और जनजातियों की संख्या के अनुपात में इन वर्गों के लिए आरक्षित होंगे। उसी प्रकार तीनों स्तरों पर अध्यक्षों के एक-तिहाई पद महिलाओं के लिए भी आरक्षित होंगे।
6. राज्यों के विधानमंडल इन संस्थाओं में पिछड़े वर्गों के आरक्षण की व्यवस्था कर सकते हैं।
7. पंचायतों का कार्य-काल पांच वर्ष का होगा और

कार्य -काल पूरा होने से पहले ही नए चुनाव करा लिए जाएंगे। पंचायत भंग किए जाने की स्थिति में छह महीने में चुनाव कराना होगा।

8. मौजूदा पंचायतों को कानून में संशोधन करके उनका कार्य-काल पूरा होने से पहले भंग नहीं किया जा सकेगा।
9. राज्य विधानमंडल के चुनाव के अयोग्य व्यक्ति पंचायत का सदस्य नहीं बन सकेगा।
10. पंचायतों के लिए मतदाता सूचियां बनाने और चुनाव प्रक्रिया की देख-रेख, दिशा निर्देशन और स्वतंत्र नियंत्रण के लिए निर्वाचन आयोग गठित किया जाएगा।
11. पंचायती राज अधिनियम की 11वीं सूची में निर्देशित मामलों के अंतर्गत आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और विकास योजनाओं का दायित्व पंचायतों को सौंपा गया है।
12. विकास योजनाओं के लिए पंचायतों को राज्य से धन मिलेगा और कुछ कर वे स्वयं वसूल कर सकती हैं।
13. प्रत्येक राज्य में एक साल के भीतर और उसके पश्चात हर पांच साल बाद वित्त आयोग का गठन किया जाएगा जो यह निर्धारित करेगा कि पंचायतों के लिए पर्याप्त वित्तीय व्यवस्था हो।
14. 24 अप्रैल, 1993 को विद्यमान पंचायतों को उनका कार्य-काल पूरा करने दिया जाएगा लेकिन उन्हें सदन में प्रस्ताव पारित करके भंग किया जा सकेगा।

पंचायती राज अधिनियम की इन क्रांतिकारी विशेषताओं से लोगों को शोषण से बचाया जा सकेगा और यह देश में समानता तथा सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने में काफी मददगार साबित होगा। ग्राम सभा में सभी वर्गों के मेल-जोल से लोगों में भाईचारा बढ़ेगा और स्थानीय उन्नति में मदद मिलेगी। जवाहर रोजगार योजना तथा समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसी योजनाओं को लागू करने का दायित्व ग्राम पंचायतों को सौंपा गया है। इससे स्थानीय साधनों का अच्छा उपयोग हो सकेगा और आवश्यकतानुसार काम-धंधे शुरू करके लोग आजीविका कमा सकेंगे। रोजगार धंधे बढ़ने से गांवों का आधार मजबूत होगा और आर्थिक समृद्धि आएगी। ग्यारहवीं सूची के अंतर्गत जो 29 दायित्व ग्राम पंचायतों को सौंपे गए हैं वे हैं - कृषि तथा कृषि विस्तार, भूमि सुधार और मृदा संरक्षण, लघु सिंचाई - जल प्रबंध, पशुपालन, दुग्ध उद्योग और कुक्कुट पालन, मत्स्य उद्योग, सामाजिक वनोद्योग और फार्म वनोद्योग, लघु वन उत्पाद, खाद्य प्रसंस्करण सहित लघु उद्योग, खादी ग्रामोद्योग और कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवासन, पेय जल, ईंधन और चारा, सड़कें, पुलिया, पुल ,नौघाट, जल मार्ग तथा संचार के अन्य साधन, गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोत, गरीबी निवारण कार्यक्रम, शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा, पुस्तकालय, सांस्कृतिक क्रियाकलाप, बाजार और मेले, अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों सहित स्वास्थ्य और स्वच्छता, परिवार कल्याण, स्त्री और बाल विकास, विकलांगों और मानसिक रूप से अविकसित के पुनर्वास सहित समाज कल्याण, अनुसूचित जाति, जनजातियों सहित कमजोर वर्गों का कल्याण, लोक वितरण प्रणाली और सामुदायिक आस्तियों का अनुरक्षण।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि ग्रामीण विकास में पंचायतों की भागीदारी उनको अधिकार सौंपने और दायित्व देने से निश्चित रूप से गांवों का स्वरूप बदलेगा और पिछड़ेपन, निराशा तथा निर्धनता की जीती-जागती मिसाल हमारे गांव जल्दी ही खुशहाल होकर देश की प्रगति में अग्रणी होंगे। आठवीं योजना में ग्रामीण विकास कार्य के लिए 30 हजार करोड़ रुपये की राशि भी रखी गई है जो कि बदली हुई परिस्थितियों को देखते हुए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

73वें संशोधन अधिनियम 1992 से ग्राम पंचायत व्यवस्था के संबंध में कानून बनाने का दायित्व राज्य सरकारों को सौंपा गया है और उनके लिए यह आवश्यक कर दिया गया है कि वे 73वें संविधान कानून की व्यवस्थाओं को लागू करें।

वैसे तो पंचायती राज संविधान संशोधन अधिनियम कई प्रकार से बेमिसाल है लेकिन संभवतः इसका सबसे महत्वपूर्ण और चमत्कारी पहलू पंचायत संस्थाओं में महिलाओं के लिए स्थानों का आरक्षण है। संविधान संशोधन की व्यवस्थाओं के अनुसार पंचायत समितियों के तीनों स्तरों में कम से कम एक - तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किए गए हैं। साथ ही तीनों स्तरों पर अध्यक्षों के एक-तिहाई पद भी महिलाओं के लिए आरक्षित करने की व्यवस्था है। मोटे तौर पर इसका अर्थ यह हुआ कि पंचायत स्तर पर आठ लाख महिलाएं पंचों के रूप में

चुनी जाएंगी और वे गांव और कस्बों की गतिविधियों में निर्णायक भूमिका निभाएंगी।

ग्राम पंचायतों के तीनों स्तरों पर अध्यक्षों के एक-तिहाई पदों के आरक्षण का अर्थ होगा कि 80,000 महिलाएं जिला, खंड और ग्राम पंचायतों की अध्यक्ष होंगी। स्वाभाविक है कि निर्णय लेने, अपने क्षेत्र की गतिविधियों तथा विकास कार्यों में इनकी भूमिका अहम होगी। इस कार्य के लिए कम से कम बीस लाख महिलाएं चुनाव लड़ेंगी और न केवल उनमें राजनीतिक जागृति आएगी, अपने अधिकारों के प्रति चेतना पैदा होगी बल्कि ये सीमित दायरे से निकल कर बाहर आएंगी खुली हवा में सांस लेने लायक होंगी, क्षेत्र के, जिले के और देश के कल्याण कार्यों में भागीदारी करेंगी।

महिला शक्ति

पंचायतें		
कुल संख्या		2.25 लाख
कुल सदस्य		22.50 लाख
महिला सदस्य	(एक तिहाई)	7.50 लाख
खंड स्तर	पंचायत समितियां	5,000
प्रति समिति 25 व्यक्ति		1.25 लाख
महिला सदस्य	(एक तिहाई)	4,000
जिला समितियां		
कुल संख्या		465
30 व्यक्ति प्रति समिति		13,950
महिला सदस्य	(एक तिहाई)	4,650
तीनों स्तरों पर पंचायती राज में महिलाएं		7.95 लाख
तीनों स्तरों की व्यवस्था पंचायती राज में महिला - प्रधान		76,000

लेकिन अगर हम व्यावहारिक रूप से विचार करें तो क्या ऐसा संभव हो पाएगा? संविधान की व्यवस्था या कानून बनाने से ही अगर सारे काम हो गए होते तो शायद आज देश का नक्शा ही बदला होता। राज्य सरकारें कानून बना देंगी लेकिन जब तक सभी स्तरों पर इसे व्यापक जन-समर्थन प्राप्त न हो, संदेह है कि इसके सार्थक परिणाम प्राप्त हो सकेंगे।

इससे अनेक मुद्दे सामने आते हैं : क्या हमारा समाज महिलाओं को सार्वजनिक कार्यों में वह स्थान देने को तैयार है? और फिर क्या महिलाएं वे जिम्मेदारियां संभालने में सक्षम हैं जो उन्हें सौंपने का प्रस्ताव है? साथ ही क्या इन उत्तरदायित्वों को निभाने और वहन करने की उनमें आवश्यक शिक्षा, योग्यता और अनुभव है? क्या पंचायतों में निहित स्वार्थ उन्हें अपना मोहरा बनाकर वांछित कार्य नहीं करवायेंगे?

पंचायतों को मुख्य रूप से विकास कार्यों का दायित्व सौंपा गया है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, खेती, लघु उद्योग, आर्थिक आधार को मजबूत बनाएंगे और राजस्व प्रशासन, न्याय व्यवस्था, नागरिक आपूर्ति और अपराध नियंत्रण विषयों से स्थानीय लोगों के सामाजिक परिवेश को सुधारने में मदद मिलेगी। महिलाएं स्वभावतः इसमें सशक्त भूमिका निभाएंगी इसमें किसी प्रकार का संदेह होना ही नहीं चाहिए।

महिलाएं अनादि काल से घर-बार संभालती रही हैं। सिंचाई और बीज, सफाई, पेय जल, शिक्षा और स्वास्थ्य के संबंध में अगर पुरुष निश्चित फैसले कर सकते हैं तो महिलाओं पर संदेह क्यों? अगर पर्दे के कारण या सामाजिक परिस्थितियों या फिर लोक-लाज के कारण महिलाओं ने अपने विचार व्यक्त नहीं किए हैं तो क्या इसका मतलब यह समझ लिया जाय कि वे कर ही नहीं सकतीं? खेती-बाड़ी, घर-बार और ब्याह शादियों के मौकों पर आर्थिक, सामाजिक और आपसी संबंधों के बारे में तो उनके फैसले होते ही हैं लेकिन अगर उस दायरे से बाहर निकल कर उन्हें निश्चित दायित्व सौंपे जायें तो पुरुषों से ज्यादा भले ही न कर पायें, उनसे पीछे वे कभी नहीं रहेंगी।

कुछ मामले और क्षेत्र ऐसे हैं जहां महिलाएं पुरुषों से ज्यादा कारगर भूमिका अदा कर सकेंगी। इसमें दहेज संबंधी मामले, पारिवारिक कलह और परिवार नियोजन को शामिल किया जा सकता है जो संभवतः महिला होने के नाते उनका स्वाभाविक कार्य क्षेत्र है। पंचायत की न्याय व्यवस्था के साथ-साथ पशु पालन और बागवानी, स्कूलों और स्वास्थ्य केंद्रों की देख-भाल आदि में भी वे सक्रिय भूमिका निभाएंगी क्योंकि इनसे उनका निकट दैनिक सम्पर्क है।

संविधान संशोधन कानून का प्रत्यक्ष प्रभाव यह होगा कि पर्दे की ओट में सिमटी महिलाओं को अब बाहर आना होगा और संभवतः आरक्षण के बिना ऐसा नहीं हो सकता था। इसके लिए शिक्षा और प्रशिक्षण, दोनों की आवश्यकता है। अनुभव तो समय के साथ ही आ पायेगा। आरक्षण से अब वे घर की चार दीवारी से बाहर निकल कर अपनी शक्ति को सामाजिक

विकास के कार्यों में लगा सकेंगी तथा राजनीतिक कार्यकलापों में सहयोग कर सकेंगी। इससे पुरुषों के प्रति झिझक दूर होकर उनमें बराबरी की भावना आएगी और वे आत्म-सम्मान तथा अपने और समाज के कल्याण के लिए कार्य कर सकेंगी।

शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए व्यवस्था सरकार को करनी होगी। साक्षर बनाना वैसे भी राज्य का दायित्व है और व्यक्ति का मूल अधिकार। इसके लिए सरकार को स्कूल खोलने होंगे, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम और विस्तार कार्यक्रम चलाने होंगे और तकनीकी शिक्षा के लिए निश्चित कार्यक्रम शुरू करना होगा। पंचायती राज कार्यकर्ताओं के लिए सरकार द्वारा राष्ट्रीय प्रशिक्षण संस्थान इसी दिशा में एक कदम है। महाराष्ट्र में राज्य सरकार बंबई के एस. एन. डी. टी. विश्वविद्यालय में महिलाओं को पंचायती राज संबधी प्रशिक्षण दे रही है। शरद जोशी की किसान सेतकारी संगठन, महिला अगाड़ी और कई स्वयंसेवी संगठन भी इस संबंध में प्रशिक्षण कार्यों में रत हैं। एक बार शिक्षित हो जाने पर प्रशासनिक तथा तकनीकी पहलुओं का ज्ञान स्वतः आने लगेगा।

लेकिन ऐसा जरूरी नहीं है कि प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए शिक्षित होने का इंतजार किया जाय। दोनों कार्यक्रम साथ-साथ चलाए जा सकते हैं। जिला कलेक्टरों को भी इस संबंध में प्रयास कर महिलाओं को पंचायत कार्यों में आगे आने के लिए प्रेरित करना होगा।

हालांकि पंचायत स्तर पर अपेक्षाकृत स्थिति सामान्य रहेगी लेकिन खंड और जिला स्तर पर कार्यों में कुछ तकनीकी बाधाएं आ सकती हैं। इसके लिए प्रशासनिक अधिकारी सहायता के लिए उपलब्ध रहेंगे।

ऐसा नहीं है कि संविधान संशोधन से ही सब कुछ होगा, पहले भी कार्य चल ही रहा है। आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा और हिमाचल प्रदेश की पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व पहले से ही है। यहां आमतौर पर 5 से 14 पंचों में से दो-तीन महिलाएं होती हैं। उड़ीसा में पिछले नवम्बर में हुए पंचायत चुनावों में 22000 महिलाएं चुनाव जीतीं जोकि निश्चित एक-तिहाई से अधिक हैं। कर्नाटक में पिछले जून में तीस हजार महिलाओं में से 14 हजार चुनाव सफलतापूर्वक जीत पाई। महाराष्ट्र में तो ऐसी पंचायतें हैं जिनकी सभी सदस्य महिलाएं हैं। आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश में भी कई पंचायतें हैं जो पूरी तरह महिला सदस्यों की हैं।

सवाल यह है कि जो प्रक्रिया शुरू हो चुकी है उसे आगे बढ़ाना है, गति प्रदान करनी है। महिलाओं को आगे आने के लिए प्रेरित करना है। उन्हें अपने दायित्वों का बोध कराना है और अधिकारों के प्रति सतर्क करना है। पंचायत-बैठकों में भाग न लेने की उनकी प्रवृत्ति को समाप्त करना है और किसी के कहे मात्र से चाहे वह अपना संबंधी ही क्यों न हो, अंगूठा लगाने से रोकना है। शिक्षा को बढ़ाना है और किशोर तथा युवा वर्ग की महिलाओं को चौके बासन से बाहर लाकर समाज कार्यों के लिए पंचायत सदस्य बन कर भूमिका निभाने के लिए प्रेरित करना है।

लोकतंत्र का सार है — प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर लोगों का सहयोग। इससे व्यवस्था टिकाऊ और मजबूत होती है, लोगों में विश्वास पैदा होता है और उनमें उत्तरदायित्व की भावना आती है। देश को आधुनिक बनाने, गरीबी दूर करने, निचले स्तर पर विकास योजनाओं का लाभ पहुंचाने और गांधीजी का स्वराज का स्वप्न साकार करने में पंचायती राज की सशक्त भूमिका है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सही निर्देशन और समाज के सभी वर्गों के समर्थन से पंचायती राज संस्थाओं की अच्छी शुरूआत करके हम समानता, न्याय पर आधारित एक गतिशील समाज का निर्माण करने का लक्ष्य पूरा करने में निश्चित रूप से सफल होंगे।

ए 4/7, मल्टी स्टोरी फलैट्स
पेशवा रोड, गोल मार्केट,
नई दिल्ली - 110001

गांवों में जरूरी है शौचालयों का प्रबंध

✍ ललन कुमार प्रसाद

गांवों में 95 प्रतिशत लोग शौचालय का इस्तेमाल नहीं करते हैं। ये लोग घरों से बाहर खेतों में पाखाना करते हैं। फिर आजकल गांवों की आबादी भी काफी बढ़ गयी है और प्रति व्यक्ति जमीन की काफी कमी हो गयी है। फलस्वरूप भूमि पर मानव-मल दिन प्रतिदिन अधिकाधिक फैलता चला जा रहा है। इससे मिट्टी और पानी दोनों ही बहुत तेजी से प्रदूषित होते जा रहे हैं। बात यह है कि भूमि पर फैला मल कुछ तो धूप, हवा इत्यादि के कारण सूख जाता है और कुछ मिट्टी में रच-बसकर उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ा देता है। लेकिन ऐसा तभी तक संभव है जब मानव-मल की मात्रा सीमित हो। किंतु आबादी बढ़ने और जमीन घटने से भूमि पर मानव-मल का उत्सर्जन बहुत अधिक मात्रा में होने लगा है। गांवों में खेतों का चप्पा-चप्पा मानव-मल से भर-सा गया है। अब खेतों की मिट्टी की तह मानव-मल के प्रदूषणकारी तत्वों से संतृप्त हो गयी है। इस तरह मानव-मल से मिट्टी प्रदूपित हो रही है।

हमारे देश की 75 प्रतिशत के लगभग जनता गांवों में रहती है, जहां मानव मल के निपटारन की कोई व्यवस्था नहीं है। बात यह है कि भारत की लगभग 90 प्रतिशत ग्रामीण जनता अत्यधिक गरीब है। उसे दोनों जून भरपेट अन्न नसीब नहीं होता। उनके शरीर सालों भर अर्द्ध नग्न बने रहते हैं। गांवों की इतनी गरीब जनता भला शौचालय कैसे बनवा सकती है। यह उनके लिए फिजूलखर्ची का कार्य है। यही कारण है कि गांवों में विरले दो-चार घरों में ही सेप्टिक शौचालय हैं। बहुत मुश्किल से तीन-चार प्रतिशत घरों में कमाऊ शौचालय हैं। फिर उन कमाऊ शौचालयों में प्रतिदिन एकत्रित होने वाले मल के निपटारन का कोई सम्यक प्रबंध नहीं है। इस तरह हम पाते हैं कि भारतीय गांव शौचालय विहीन हैं। वहां प्रायः सभी लोग खेतों में ही मल-मूत्र का परित्याग करते हैं। बरसात के मौसम में मानव-मल से मिट्टी के साथ-साथ पानी भी प्रदूषित हो जाता है। यही मृदा प्रदूषण सभी प्रकार के अन्य प्रदूषणों को आश्रय देता है। फलस्वरूप यह मृदा प्रदूषण अनेक बीमारियों को जन्म देने और फैलाने का मुख्य कारक बन जाता है।

बीमारियां मुख्य रूप से गंदगी से फैलती हैं और मानव-मल गंदगी का मुख्य स्रोत है। मानव-मल से होने वाली आम बीमारियां हैं — अतिसार (दस्त की बीमारी), पेचिश, हैजा, पीलिया, मोतीझरा (टाइफाइड), पेट के कीड़े इत्यादि। अतः गांव वालों को चाहिए कि वे खेतों या खुले स्थानों में शौच न करें। हर हालत में शौचालय का इस्तेमाल करें। यदि शौचालय नहीं है और न ही शौचालयों के निर्माण की सामर्थ्य है तो शौच के लिए जमीन में गड्ढा खोद लें और बाद में मल को मिट्टी से ढक लें।

गांवों में लगभग अधिकांश लोग नंगे पांव शौच के लिए जाते हैं। वैसे भी गांवों में ज्यादातर लोग नंगे पांव ही चलते हैं। इससे ग्रामवासियों को विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त होने का खतरा बढ़ जाता है। अतः मानव-मल से उत्पन्न रोगाणुओं से ग्रस्त मिट्टी से पैरों को बचाने हेतु शौच के लिए जाते समय ग्रामवासियों को चप्पल अवश्य पहनने चाहिए। लेकिन यह कोई कारगर उपाय नहीं है, क्योंकि चप्पल पहन कर ढेर सारे कृषि-कार्य सम्पन्न नहीं किये जा सकते हैं। अतः गांवों में शौचालयों का निर्माण जरूरी है।

शौचालयों के निर्माण एवं उपयोग से मानव-मल का सुरक्षित निपटारन संतोषजनक ढंग से करने में मदद मिलती है। शौचालय के निर्माण से छोटे-बड़े सभी को मल-मूत्र परित्याग हेतु एकांत जगह मिल जाती है। विशेषकर बरसात के मौसम में ग्रामीणों के लिए मल-मूत्र परित्याग का कार्य बहुत ही असुविधाजनक हो जाता है। बरसात के दिनों में सांप-बिच्छू निकलते हैं। गांवों में खासकर बरसात की रात में खेतों या खुली जगहों में शौच के लिए आते-जाते समय यह दुखद घटना प्रायः होती रहती है। अतः शौचालय की व्यवस्था से इस मौसम में ग्रामवासियों को सांप-बिच्छू के काटने का कोई भय नहीं रहता है।

शौचालय की सुविधा प्राप्त हो जाने पर ग्रामवासी मल-मूत्र त्याग हेतु खेतों में जाने की अपनी पुरानी आदत छोड़ देंगे। इससे बच्चों सहित समस्त ग्रामीण-जनों को सफाई से रहने की आदत को बढ़ावा मिलेगा और ग्रामीण वातावरण साफ और स्वच्छ बना रहेगा तथा लोगों की बीमारियों से रक्षा होगी।

शौचालयों की उचित देखभाल आवश्यक है। ऐसा इसलिए कि गंदा होने पर शौचालय दिन प्रतिदिन और अधिक गंदा होता चला जाता है और अन्ततः लोग उसका इस्तेमाल करना छोड़ देते हैं। इसलिए शौचालय में इस्तेमाल तथा सफाई के लिए रोजाना पर्याप्त पानी रखें और जरूरत पड़ने पर उसकी तुरंत मरम्मत कराएं।

इतना तो बिल्कुल स्पष्ट है कि गांवों में शौचालयों का अभाव ही ग्रामीण पर्यावरण के प्रदूषण का मुख्य कारण है। लेकिन ग्रामीण नागरिक निर्धन और अशिक्षित होने के कारण नगरों तथा शहरों में रहने वालों की अपेक्षा 'पर्यावरण' शब्द से कम परिचित हैं। ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति इतनी कमजोर व असंतुलित है कि रोटी, कपड़ा और टूटी-फूटी झोपड़ीनुमा मकान जैसी न्यूनतम सामाजिक आवश्यकता के लिए उनके पास धन नहीं है। उनकी प्राथमिकताएं रोटी, कपड़ा और मकान है, पर्यावरण नहीं। अतः निर्धन ग्रामीणों के लिए शौचालयों का प्रबंध मुफ्त कराना होगा। यह कार्य सरकारी और विशेषकर स्वयंसेवी संस्थाएं ही करा सकती हैं। इसके लिए सरकारी विभागों और गैर-सरकारी संगठनों को एक साथ मिलकर ग्रामीण समाज में सफाई के प्रति जन-जागरण का व्यापक अभियान छेड़ना होगा। ग्रामीणों को स्वच्छ शौचालय के महत्व के बारे में जानकारी देनी होगी। ग्रामीणों को बताना होगा कि स्वच्छ शौचालय मिट्टी और पानी दोनों को प्रदूषित होने से रोकते हैं। ग्रामीणों को समझाना होगा कि स्वच्छ शौचालय उन्हें स्वस्थ रखने तथा उनकी कार्य क्षमता बढ़ाने में अहम भूमिका निभा सकते हैं।

रसायनशास्त्री,
प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्व विभाग,
पटना विश्वविद्यालय,
पटना - 800 005

लघु कथा

"रंगाए दे पिया चुनरी..."

✍डा० ज्ञानेश्वरी बाजपेयी

आसमान में बादल छाए हुए थे। ठंडी हवा के झोंके लग रहे थे। मैं अभी-अभी फुरसत पाकर थोड़ा आराम करने को लेटी थी कि आंख झपक गयी। जरा देर में ही कानों में संगीत का स्वर पड़ा, आंख खुल गयी। खिड़की से झांका तो बसंती अपने दरवाजे की चौखट पर खड़ी मुस्करा कर गा रही थी - "रंगाए दे पिया चुनरी एही सावन में....." सामने ही उसका दो ढाई वर्ष का गोल मटोल बेटा गुल्लू खेल रहा था। कितनी खुश और खिली-खिली है आज बसंती। दो वर्ष बाद मायके आयी है।

मुझे याद है तीन वर्ष पहले की रोती, सिसकती बसंती। सामान्य मां बाप की बेटी, बहुत ऊंचा घर परिवार कैसे उसके माता-पिता जुटा पाते। रतन ने उस वर्ष एम. ए. किया था। किंतु दो वर्ष पहले से ही वह नौकरी खोजते-खोजते थक चुका था। बसंती का विवाह उससे कर दिया गया था। पत्नी को अत्यधिक प्यार करते हुए भी बेचारा क्या करता? केवल प्यार से पेट की आग तो शांत होने से रही। वह बसंती को अधिकतर मायके में रहने को ही कहता। बसंती यह नहीं चाहती थी। रतन से अलग रहना उसे बहुत भारी पड़ता था।

एक बार इसी प्रकार वह मेरे सामने अपना दुखड़ा रोने लगी। मैंने उसे समझाया कि आजकल 'ट्राइसेम योजना' के अंतर्गत सरकार ऐसे ही बेरोजगारी की भरपूर मदद कर रही है। रतन को इससे लाभ उठाना चाहिए। बसंती ने मेरी बातें विस्तार से रतन को बताईं। रतन पढ़ा-लिखा तो था ही। उससे तुरंत सब बातों का पता किया और बिजली के सामान बनाने की ट्रेनिंग लेने लगा। ट्रेनिंग लगन से पूरी करके उसने अपने मित्र जसबीर सिंह की मदद ली और सरकार से ऋण प्राप्त कर लिया।

आज उसकी बिजली के सामान की और बिगड़े सामान बनाने की कस्बे में छोटी सी दुकान है। वह अब खूब खुशहाल है और बसंती भी खुश है। अब दो वर्ष बाद बसंती इस सावन में कजरी करने मायके आ पाई है।

95/62, छोटा बघाड़ा,
प्रयाग, इलाहाबाद-2

साक्षरता मिशन – प्रभावी अभियान का दृष्टिकोण

"एक व्यक्ति—एक को पढ़ाए"—इस नारे से आरंभ किए गए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का उद्देश्य 15 से 35 आयु वर्ग के आठ करोड़ वयस्क निरक्षरों को वर्ष 1995 तक कामकाज के लायक साक्षर बना देना है। तीन करोड़ 18 लाख से अधिक व्यक्तियों को पहले ही साक्षर बनाकर यह मिशन अपने घोषित उद्देश्य की तरफ निरंतर बढ़ता जा रहा है। देश में सात वर्ष और उससे अधिक आयु वाली जनसंख्या के लिए साक्षरता की व्यापक दर 1981 में 43.56 प्रतिशत थी जो बढ़ते हुए 1991 में 52.21 प्रतिशत तक पहुंच गई। पुरुषों में साक्षरता दर 1981 के 56.37 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 64.13 प्रतिशत हो गई जबकि महिलाओं में 1981 से 1991 तक की अवधि में साक्षरता दर 29.75 प्रतिशत से बढ़कर 39.28 प्रतिशत तक ही हो पाई। इस तरह यह वृद्धि 9.54 प्रतिशत रही।

उभरता परिदृश्य

साक्षरता दर सूची में केरल 89.79 प्रतिशत साक्षरों के साथ सबसे पहले स्थान पर है। उसके बाद क्रमिक रूप से मिजोरम में 82.27 प्रतिशत, लक्षद्वीप में 81.78 प्रतिशत और चंडीगढ़ में 77.81 प्रतिशत साक्षर हैं। इस क्रम में सब से कम 38.48 प्रतिशत साक्षर बिहार में हैं। उससे अधिक 38.55 प्रतिशत राजस्थान में और फिर 41.71 प्रतिशत साक्षर दादरा और नगर हवेली में हैं।

सिक्किम में महिला साक्षरता दर में 19.29 प्रतिशत की बहुत ही महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। यह वृद्धि लक्षद्वीप में 17.45 प्रतिशत, हरियाणा में 13.57 प्रतिशत, मणिपुर में 13 प्रतिशत, दमण और दीव में 12.94 प्रतिशत, पांडिचेरी में 12.63 प्रतिशत तथा अंडमान-निकोबार द्वीप समूह में 12.26 प्रतिशत हुई।

22 राज्यों और संघ क्षेत्रों में साक्षरता दर 52.21 प्रतिशत के अखिल भारतीय स्तर से अधिक है। केवल बिहार, राजस्थान, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, उड़ीसा तथा दादरा और नगर हवेली में यह दर 50 प्रतिशत से कम रही। अप्रैल-जून 1989 में कोट्टायम कस्बे में और दिसम्बर 1989 में अर्नाकुलम जिले में आरंभ कर, संपूर्ण साक्षरता अभियानों का श्रीगणेश और सफल संचालन समूचे केरल राज्य तथा संघ क्षेत्र पांडिचेरी में किया गया। ये अभियान आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गोआ, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल के 213 जिलों में परियोजनाओं के जरिए अंशतः या पूर्णतः लागू करने के लिए मंजूर किये जा चुके हैं। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन एक सामुदायिक कार्य है जिसकी सफलता, सामाजिक शक्तियों को गतिशील बनाने और जन-सहयोग प्राप्त करने पर निर्भर है। वयस्क साक्षरता और शिक्षा कार्यक्रमों के वैकल्पिक प्रतिमानों के लगातार परीक्षण करने के बाद अब भारत ने अभियान-परक दृष्टिकोण अपनाया है।

मूल्यांकन

समग्र साक्षरता अभियान 75 जिलों में सम्पन्न हो चुके हैं और इन जिलों में साक्षरता के बाद के कार्यक्रम भी आरंभ हो चुके हैं। समग्र साक्षरता अभियानों के दर्जे और प्रभाव के मूल्यांकन के लिए एक विशेषज्ञ दल बनाया गया है, जो इस मूल्यांकन के लिए चुने हुए कुछ सामाजिक विज्ञान संस्थानों का मार्ग-निर्देश और निरीक्षण करेगा।

इस मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय साक्षरता मिशन द्वारा निर्धारित साक्षरता स्तर को ध्यान में रखते हुए यह मालूम करना है कि साक्षरता अभियान का नौसिखियों पर क्या प्रभाव पड़ा है। साथ ही यह विश्लेषण किया जायेगा कि महिलाओं और पुरुषों में विभिन्न आयु वर्गों में तथा अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों में कितने लोगों को साक्षर बनाए जाने का अनुमान है। आठवीं योजना में वयस्क शिक्षा-कार्यक्रमों में क्षेत्र दृष्टिकोण अपनाए जाने की कार्यनीति मुख्य रूप से अपनाई जायेगी। योजना की अवधि के समाप्त होने तक 345 जिले समग्र साक्षरता अभियान के माध्यम से लगभग 80 लाख व्यक्तियों को साक्षर बनाने तथा योजना के अंत तक अन्य कार्यक्रमों के दायरे में दो करोड़ और व्यक्ति लाने का लक्ष्य है। आठवीं योजना में केंद्रीय क्षेत्र के लिए कुल मिलाकर 14 अरब रुपये का प्रावधान किया गया है।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

ग्रामीण विकास : प्रयोग से परिणाम तक

एल. बी. प्रसाद

सम्पूर्ण विश्व में भारत की सभ्यता एवं संस्कृति सबसे पुरानी मानी जाती है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की ओर दृष्टि दौड़ाने पर ऐसा प्रमाण मिलता है कि भारतवर्ष में सदियों से ग्रामीण व्यवस्था कार्यरत रही है क्योंकि भारत अब तक ग्राम प्रधान देश रहा है और आज तक तीन चौथाई से अधिक की आबादी गांवों में निवास कर रही है। वेद एवं उपनिषद् काल में भी ग्रामीण प्रशासन के प्रमाण मिलते हैं। बल्कि यह कहा जा सकता है कि इस अवधि में ग्रामीण शासन प्रशासन की एक मुख्य कड़ी मानी जाती थी जो विकास, विधि व्यवस्था एवं राजस्व कार्य के लिए अधिकृत एवं उत्तरदायी होती थी। गुप्त एवं मौर्य काल में भी ग्रामीण शासन के संकेत मिलते हैं। मुगल एवं अंग्रेजी शासन की लंबी अवधि में भी ग्रामीण शासन के बदलते स्वरूप का प्रमाण मिलता है, हालांकि इस लंबी अवधि में ग्रामीण शासन जीर्ण-शीर्ण अवस्था में रहा। अंग्रेजी शासन के अंतिम दो-तीन दशकों में ग्रामीण शासन का ग्रामीण विकास की दिशा में कुछ छिट-पुट प्रयोग किया गया जो व्यक्ति विशेष, समाज सुधारक, राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री, साहित्यकार के स्वंचितन पर आधारित था। गांधी जी का 'ग्राम स्वराज', रवीन्द्र नाथ ठाकुर का 'ग्राम श्री' आदि इस दिशा में अग्रणी प्रयोग माने जाते हैं। इस कार्यक्रम के अतिरिक्त अन्य प्रयोग जैसे 'मार्तड़म प्रयोग', 'गुरूगांव प्रयोग', 'ग्रामीण पुनर्गठन बरोड़ा प्रयोग', 'फिरका विकास प्रयोग', 'इटावा पाइलट प्रोजेक्ट प्रयोग' एवं 'नीलोखेरी प्रयोग' भी ग्रामीण विकास कार्यक्रम की मुख्य कड़ी मानी जा सकती है। इस कार्यक्रम को तत्कालीन शासन का कोई प्रशासनिक एवं आर्थिक समर्थन प्राप्त नहीं था, लेकिन आने वाले स्वर्णिम दिन के लिए सूचक जरूर था।

आजादी के बाद देश को नेतृत्व देने वालों ने यह सोचा कि भारत का सही विकास ग्रामीण विकास के बिना संभव नहीं है। भारत की सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक स्थिति, राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक पहलू को राष्ट्र पिता ने बहुत ही पैनी दृष्टि से देखा और यह मंतव्य दिया कि भारत गांवों का देश है, भारत की आत्मा गांवों में बसती है। भारत की अर्थव्यवस्था गांवों पर आधारित है अतः जब तक गांवों का सही और समुचित विकास नहीं होगा तब तक हमारी आजादी कोरी कल्पना मात्र है।" राष्ट्रपिता के अनुभव का लाभ उठाते हुए आजादी के बाद 1951 में सम्पूर्ण देश में नियोजित विकास के लिए योजना आयोग का गठन किया गया और सन् 1952 मे 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' नये जोश के साथ सम्पूर्ण देश में लागू किया गया। सम्पूर्ण ग्रामीण समुदाय के बहुमुखी विकास की मंशा से देश भर में प्रशासन एवं विकास इकाई का एक जाल सा बिछा दिया गया और इस कार्यक्रम के कार्यान्वियन का उत्तरदायित्व विकास पदाधिकारियों, पर्यवेक्षकों एवं ग्रामीण स्तर के कार्यकर्ताओं को सौंपा गया और बड़े पैमाने पर विकास का लाभ ग्रामीण समुदाय तक पहुंचाने का प्रयास जारी रहा।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कार्यान्वियन के कुछ वर्षों के बाद किये गये अध्ययन एवं सर्वेक्षण में एक प्रश्न स्पष्ट रूप से उभर कर आया कि ग्रामीण क्षेत्र के अमीर, साधन-सम्पन्न, दबंग एवं पढ़े-लिखे लोगों को विकास का अधिकाधिक लाभ मिला और समाज के कमजोर, बेसहारा एवं निरक्षर लोगों को लाभ नहीं के बराबर प्राप्त हो सका। फलस्वरूप द्वितीय पंचवर्षीय योजनावधि में "पंचायती राज शासन प्रणाली" लागू की गयी। इस पद्धति को लागू करने के पीछे सरकार की यह मंशा थी कि विकास का कार्य अकेले सरकारी तंत्र द्वारा कार्यान्वित कराना व्यावहारिक नहीं बल्कि इसे स्थानीय जनता एवं जनप्रतिनिधि के संयुक्त प्रयास से अधिक प्रभावकारी बनाया जा सकता है, जिससे लाभ अधिक से अधिक लोगों को प्राप्त हो सकेगा। इस पद्धति के लागू होने से कुछ प्रांतों में इसके अच्छे परिणाम भी प्राप्त हुए लेकिन बाद के वर्षों में कई कारणों से इस प्रणाली को सुदृढ़ आधार नहीं मिल सका। फलतः कई राज्यों में यह प्रणाली प्रभावहीन रह गयी। इस बीच देश में लगातार कई वर्षों तक अकाल की विभीषिका छायी रही और योजनाकारों को बाध्य होकर कृषि एवं अन्न उत्पादन पर देश के बहुत बड़े संसाधन को लगाना पड़ा। इस अवधि में कृषि एवं कृषि उत्पादन में

क्रांतिकारी विकास हेतु 'गहन कृषि जिला कार्यक्रम' एवं 'गहन कृषि क्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'उन्नत बीज विकास कार्यक्रम' आदि को बड़े पैमाने पर लागू किया गया। अन्न उत्पादन में अल्प अवधि में ही काफी अच्छे परिणाम मिले और देश काफी हद तक अन्न के मामले में स्वावलंबी हो गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में भारी एवं मध्यम उद्योग के निर्माण की ओर अधिक ध्यान दिया गया लेकिन योजना के अंत में 'बहुद्देशीय जनजाति प्रखंडों' का भी चयन कर कमजोर वर्ग खासकर जनजातियों के लाभ के लिए कार्यक्रमो का विस्तार किया गया। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि तृतीय पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विकास के अतिरिक्त भारी एवं मध्यम दर्जे के उद्योगों की स्थापना पर विशेष ध्यान दिया गया।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजनावधि में अनेक नए-नए कार्यक्रमों की रूप रेखा तैयार की गई। इस अवधि में क्षेत्र विशेष आधारित अनेक कार्यक्रमों जैसे 'कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'मरूक्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'गंगा मैदानी क्षेत्र विकास कार्यक्रम', 'सूखाड़ोन्मुख क्षेत्र विकास कार्यक्रम' जैसे अनेक कार्यक्रमों को कार्यरूप दिया गया। इन क्षेत्र विशेष आधारित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के पीछे सरकार की यह मंशा थी कि क्षेत्र विशेष की आवश्यकता एवं वहां पर उपलब्ध संसाधन के आधार पर कार्यक्रम बनाये जाएं क्योंकि तीसरी पंचवर्षीय योजना के उत्तरार्ध तक देश के कुल क्षेत्र के विकास में काफी तेजी आई वहां साधन स्रोतों में वृद्धि हुई, रहन सहन के स्तर में परिवर्तन आया और उन क्षेत्रों में आम लोगों की आर्थिक हालत में विकास हुआ लेकिन देश के अनेक ऐसे क्षेत्रों में विकास की गति बहुत ही धीमी थी, वहां कमजोर वर्गों एवं गरीबों के साथ साथ आम लोगों की आर्थिक स्थिति यथावत बनी रही। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इन क्षेत्र विशेष विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से देश के सम्मुख जो क्षेत्रीय असंतुलन का प्रश्न था उसमें क्रमिक रूप से कमी आई जो एक अच्छी उपलब्धि मानी जाती है। लेकिन इन सभी कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने पर भी कुछ ऐसे समूह जैसे भूमिहीन, कृषक मजदूर, छोटे किसान, ग्रामीण दस्तकार आदि को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लाभ का बहुत कम अंश प्राप्त हो सका। यह भी कहा जा सकता है कि इस वर्ग को विकास का लंबी अवधि तक लाभ नहीं मिल सका।

सरकार ने पांचवी पंचवर्षीय योजना में कार्यक्रमों को अधिक परिणामोन्मुखी बनाने की मंशा से वैसे कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर लागू करने का प्रयास किया गया जिनसे ग्रामीण क्षेत्र के अपेक्षाकृत गरीब या साधनहीन वर्ग को अधिक लाभ हो। ऐसे वर्ग को लाभ पहुंचाने की मंशा से 'लघु कृषक विकास कार्यक्रम' एवं 'सीमांत कृषक विकास कार्यक्रम' को देश के अनेक क्षेत्रों में लागू किया गया। इस कार्यक्रम से ग्रामीण क्षेत्रों के छोटे एवं सीमांत किसानों को सीधा लाभ प्राप्त हो सका लेकिन निर्धन, भूमिहीन, बेसहारा वर्ग के जीवन स्तर में कोई खास सुधार नहीं हो सका। इसी दशक में गरीबी उन्मूलन एवं आम नागरिक जीवन को बेहतर बनाने की मंशा से 'न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम' की रूपरेखा तैयार कर कार्यान्वित की गयी जो एक 'पर्सपेक्टिव कार्यक्रम' के रूप में था और लक्ष्य प्राप्ति के लिए 15 वर्ष की अवधि निश्चित की गई। दुर्भाग्यवश प्रारंभिक वर्षों में इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन में कई कारणों से तेजी नहीं आ सकी। इस योजना अवधि के अंत में 'अंत्योदय कार्यक्रम' एवं 'काम के बदले अनाज कार्यक्रम' लागू कर निर्धन एवं मजदूर वर्ग को राहत देने का प्रयास किया गया। इसका सीधा लाभ गरीबों को तो मिला ही साथ ही साथ ग्रामीण क्षेत्र के संसाधनों में भी वृद्धि हुई।

छठी पंचवर्षीय योजना अवधि में ग्रामीण विकास कारगर बनाने की मंशा से ग्रामीण क्षेत्र के निर्धनतम परिवारों को लाभ पहुंचाने की बात सोचते हुए गरीबों के लिए सभी कार्यक्रमों को समेकित कर "गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम" लागू किया गया। इस कार्यक्रम में सिर्फ गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों को ही सीधा लाभ पहुंचाने की मंशा से सम्पत्ति एवं मजदूरी दोनों प्रकार की सुविधा प्रदान करने का प्रयास किया गया।

गरीबी के विरुद्ध कड़े संघर्ष करने के उद्देश्य पर आधारित रणनीति के तहत समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम में 'ग्रामीण युवक' और 'ग्रामीण महिला' एवं 'शिशु विकास' के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार कर कार्यान्वित किया गया। ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी की गंभीर समस्या से निपटने के लिए 100 दिन के रोजगार की गारंटी का लक्ष्य बनाकर 'राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम' एवं 'ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम' को राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में लागू किया गया। 1989 में पंचायतों को सुदृढ़ करने एवं योजना को विकेंद्रित करने की मंशा से 'जवाहर रोजगार योजना' कार्यान्वित की गयी। वर्तमान स्थिति में योजनाएं ग्रामीण स्तर पर ही लागू की जाती हैं। गरीबी रेखा

से नीचे के परिवारों की सूची भी पंचायत स्तर पर ही तैयार की जाती है। स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवकों की दक्षता में वृद्धि कर उन्हें स्थानीय क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करने का अवसर दिया जाता है। ग्रामीण महिलाओं को अपनी आय बढ़ाने के लिए उत्प्रेरित किया जाता है। कार्यक्रम को परिणामोन्मुख बनाने के लिए मार्गदर्शन की भी व्यवस्था है। इन सभी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, गरीबी की प्रतिशतता में कमी आयी है। साथ ही साथ ग्रामीण क्षेत्र में संसाधन एवं सुविधाओं में भी वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़े हैं, महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है और स्थानीय संसाधन सुदृढ़ एवं विकसित हुए हैं।

संकाय सदस्य
बिहार ग्रामीण विकास संस्थान,
हेहल, रांची - 834005

सड़कें चलीं मिलाने गांव

मोहन चन्द्र मंटन

गांव नगर जो दूर-दूर हैं -
उनको पास मिलाने का -
काम किया है सड़कों ने ही -
उनको पास बुलाने का।
पूरब - पश्चिम उत्तर - दक्षिण
तक ही सारे देश में
फैली - सड़कें निज -
व्यापारी उद्योगी परिवेश में।
सड़कें अगर नहीं होती तो -
रहते सब अनजान से
गांव नगर को नगर गांव को -
भला कहां पहचानते।
दोनों का ही सुखद मिलन यह -
दोनों की पहचान है -
और इसी में ही पहचाना -
जाता हिंदुस्तान है।
शाक भाजियों फल-फूलों से
लदी अन्न से गाड़ियां
नगरों का भर पेट रही हैं
सड़कों पर चल गाड़ियां
नगरों से फिर चीजें लातीं -
हैं दैनिक उपयोग की -
नहीं गांवों में जो मिलती हैं
उन्हें दिला उपभोग की।
नगरों औ गांवों का जीवन -
आता इससे पास है
एक दूसरे पर हो निर्भर -
आशा औ विश्वास है।
मिटी आज दोनों की दूरी -
दोनों में ही मेल है
आज यहां से वहां पहुंचना -
पल भर का ही खेल है।

ई. 216, टाइप - I क्वार्ट्स,
मोती बाग-I नई दिल्ली - 110021

ग्रामीण ऋणग्रस्तता के कारण

✍प्रो. पी. पी. बुधलाकोटी
एवं
एम. एस. सजवान

भारत गांवों का देश है। यहां पर अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आश्रित है। लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि क्षेत्र में कार्यरत है। कृषि पर जनसंख्या के अधिक दबाव के कारण ग्रामीण समाज में ऋणग्रस्तता की स्थिति स्पष्ट दिखाई देती है। गांवों में कृषि व्यवसाय के अलावा अन्य क्षेत्रों में रोजगार के साधनों का विकास नहीं हो पाया है। इसलिये ग्रामीण क्षेत्रों में आय के अधिक स्रोतों का उचित लाभ ग्रामीण व्यक्ति नहीं ले पाते हैं। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक है कि गांवों में बेरोजगारी की स्थिति भयावह बनी हुई है।

भारतीय कृषि पर महाजनी पूंजी का नियंत्रण बहुत मजबूत है और ऋणग्रस्तता छोटे किसानों के जीवन का सामान्य लक्षण है। स्वतंत्रता से पहले अन्य संस्थानों का विकास न होने के कारण किसानों की महाजनों पर अत्यधिक निर्भरता थी। महाजन उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर उनका भरपूर शोषण करते थे। स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने महाजनों की गतिविधियों पर नियन्त्रण लगाने के उद्देश्य से कई कदम उठाये। इनमें सबसे महत्वपूर्ण कदम था वैकल्पिक संस्थाओं का विकास, विशेष रूप से सहकारी समितियों तथा बैंकों की कृषि वित्त में बढ़ती हुई भूमिका। परन्तु बहुत से छोटे, किसान खेतिहर मजदूर तथा अन्य ग्रामीण लोग आज भी अपनी ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए महाजनों अथवा धनी व्यक्तियों पर निर्भर रहते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि अल्प बचत संस्थाएं केवल उत्पादक कार्यों के लिए ऋण देती हैं जबकि इन लोगों को कई अनुत्पादक कार्यों, जैसे—शादी, सामाजिक उत्सव, मुकदमेबाजी के लिए ऋण की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार के ऋण इन व्यक्तियों से सरलता से मिल जाते हैं। ये लोग अत्यधिक ब्याज लेते हैं, खाते बनाने में बेईमानी और गड़बड़ी करते हैं तथा कई तरीकों से इन अनपढ़ गरीब लोगों को ठगते हैं। एक बार इन व्यक्तियों के चंगुल में फंस जाने पर निकल पाना ग्रामीण निर्धन लोगों के लिए बहुत मुश्किल होता है।

यह ग्रामीण ऋणग्रस्तता सामाजिक व्यवस्था अथवा दूसरे शब्दों में उत्पादक सम्बन्धों का परिणाम है। भारत में ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादन सम्बंध आज भी अर्द्ध-सामन्ती हैं। खेतिहर मजदूरों और छोटे किसानों का भूमि के मालिकों द्वारा शोषण ही उनकी आर्थिक दुर्दशा के लिए जिम्मेदार है और यही प्रधान रूप से ग्रामीण व्यक्तियों की ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण है।

इसी परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण क्षेत्र में ऋणग्रस्तता के कारणों का पता लगाने के लिए जिला नैनीताल के विकास खण्ड खटीमा के अन्तर्गत ग्राम-मुंडेली का सर्वेक्षण किया गया। मुंडेली गांव का आर्थिक सर्वेक्षण निर्दशन पद्धति के आधार पर किया गया। गांव के समस्त परिवारों का अध्ययन न करके निर्दशन के द्वारा 15 परिवार छांटे गये। न्यादर्श विभिन्न जातियों तथा आय-वर्ग एवं जोतों के आकार को ध्यान में रखते हुए छांटे गये, तथा इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया कि न्यादर्श समग्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। हमारे अध्ययन का आधार यही है कि न्यादर्श में वही कारण होते हैं जो सम्मिलित रूप से समग्र में देखने को मिलते हैं।

इस प्रकार प्रश्नावली के आधार पर संकलित आर्थिक तथ्यों के द्वारा सम्पूर्ण भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में ऋणग्रस्तता की स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

जोतों का आकार

मुंडेली गांव के न्यादर्श परिवारों के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि यहां पर खेतों का आकार बहुत छोटा है। जैसे कि निम्न सारणी-1 में स्पष्ट है कि मुंडेली गांव में सबसे अधिक परिवारों के पास दो बीघे से कम भूमि है। यहां पर कुल 53.33 प्रतिशत परिवार 0-2 बीघे के अन्तर्गत आते हैं, जब कि 26.67 प्रतिशत परिवार 2-4 बीघे के अन्तर्गत आते है। सबसे कम 6.67 प्रतिशत परिवारों की संख्या 6 बीघे से ऊपर है।

सारणी-1

जोतों का	भूमि		परिवार	
आकार	बीघे में	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
0-2	10	27.02	8	53.33
2-4	11	27.05	4	26.67
4-6	9	27.00	2	13.33
6 से ऊपर	7	18.93	1	6.67
योग	37	100.00	15	100.00

अर्थात कहा जा सकता है कि यहां पर जोतों का आकार छोटे होने के कारण यहां के अधिकांश परिवार गरीब हैं। उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अन्य गैर कृषि साधनों पर भी आश्रित रहना पड़ता है या ऋण लेना पड़ता है।

व्यावसायिक संरचना

मुंडेली गांव के व्यक्तियों की व्यावसायिक संरचना की स्थिति को सारणी-2 में प्रदर्शित किया गया है:

सारणी-2

क्रम सं.	कार्य क्षेत्र	कार्यरत व्यक्ति	प्रतिशत
(क)	कुल जनसंख्या	176	100
(ख)	कार्यशील जनसंख्या	83	47.16
1.	कृषि तथा पशुपालन	61	73.5
2.	मजदूरी	17	20.5
3.	नौकरी	5	6.0

न्यादर्श परिवारों से स्पष्ट है कि यहां पर कुल जनसंख्या का 47.16 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या है जबकि कार्यशील जनसंख्या में से 73.5 प्रतिशत व्यक्ति कृषि तथा पशुपालन में कार्यरत हैं, मजदूरी तथा नौकरी में क्रमशः 20.5 प्रतिशत तथा 6 प्रतिशत हैं, इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ग्रामीण समाज में आश्रित व्यक्तियों का प्रतिशत बढ़ा है जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति का सन्तुलन बिगड़ता है जिस कारण व्यावसायिक संरचना की स्थिति को देखते हुए ऋणग्रस्तता का अनुमान लगाया जा सकता है।

परिवारों का स्वरूप

परिवारों का स्वरूप भी ग्रामीण ऋणग्रस्तता को प्रभावित करता है। मुंडेली गांव में अधिकांश परिवार एकाकी हैं। कुछ परिवार मिश्रित तथा संयुक्त भी हैं। इस ग्राम में एकाकी, संयुक्त तथा मिश्रित परिवारों का प्रतिशत सारणी-3 से स्पष्ट है:

सारणी-3

क्र. सं.	परिवारों का स्वरूप	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	एकाकी	10	66.7
2.	मिश्रित	3	20.0
3.	संयुक्त	2	13.3
	योग	15	100.00

सारणी-3 से स्पष्ट है कि ग्राम-मुंडेली के अधिकांश परिवार एकाकी हैं तथा उनका प्रतिशत 66.7 है। मिश्रित परिवार 20 प्रतिशत हैं जबकि संयुक्त परिवार 13.3 प्रतिशत है। यहां पर यह भी दृष्टव्य है कि सभी संयुक्त परिवार थारू जनजाति के हैं। संयुक्त होने से इन परिवारों में ऋणग्रस्तता की स्थिति अधिक देखी जा सकती है।

सामाजिक वातावरण

मुंडेली गांव में थारू जनजाति की प्रधानता है। इसलिए गांव का वातावरण थारू जनजाति की सामाजिक मान्यताओं तथा परम्पराओं के अनुरूप ढल गया है। यह भी ज्ञात हुआ है कि थारू परिवार पितृवंशीय होते हैं, जिस कारण वे अपने पारम्परिक रीति-रिवाजों को अपनाते रहे हैं। इनमें यह प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है कि ये अपने सगे-सम्बन्धियों का विशेष आदर-सत्कार करते हैं। ऐसे समय में चाहे इनके पास आर्थिक तंगी क्यों न हो, उधार लेकर, यहां तक की अपनी जमीन को गिरवी रख देते हैं। तीज-त्यौहारों में, धार्मिक उत्सवों एवं मेलों में, ये लोग अधिक रुचि लेते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक वातावरण ने मुंडेली गांव की ऋणग्रस्तता को सर्वाधिक प्रभावित किया है।

आय-व्यय और बचत की स्थिति

मुंडेली गांव के सर्वेक्षणगत परिवारों से यह दृष्टिगत होता है कि यहां पर ऋणग्रस्तता की स्थिति बड़ी गम्भीर समस्या बनी हुई है। आय का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि मुंडेली गांव में आय के स्रोत निम्न हैं। इसे सारणी-4 में स्पष्ट किया गया है।

सारणी-4

आय की स्थिति				(औसत प्रति परिवार प्रतिशत में)	
जोतों का आकार	कृषि	गैर-कृषि	मजदूरी	नौकरी	योग
0-2	35.71	20.00	22.86	21.43	100
	(7.78)	(11.48)	(57.14)	(4.23)	
2-4	43.76	14.06	10.55	31.63	100
	(15.50)	(13.11)	(42.86)	(10.63)	
4-6	41.26	10.13	—	48.61	100
	(25.36)	(16.39)	—	(27.04)	
6 से ऊपर	37.08	16.18	—	46.74	100
	(51.36)	(59.02)	—	(58.59)	
योग	38.88	14.77	3.39	42.96	100
	(100)	(100)	(100)	(100)	

सारणी-4 में मुंडेली गांव की औसत प्रति परिवार आय को दर्शाया गया है। सर्वाधिक आय नौकरी क्षेत्र में 42.96 प्रतिशत है, इसके बाद कृषि में 38.88 प्रतिशत है। गैर कृषि तथा मजदूरी में क्रमशः 14.77 प्रतिशत तथा 3.39 प्रतिशत है। यदि जोतों के आकार पर दृष्टिगत करें तो कृषि क्षेत्र में सर्वाधिक आय के 6 बीघे से ऊपर वाले परिवार में 51.36 प्रतिशत आय प्राप्त होती है जब कि सबसे कम 7.78 प्रतिशत 0-2 बीघे जोतों के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि कृषि क्षेत्र में जनसंख्या का दबाव अधिक होने के कारण ऋणग्रस्तता की स्थिति अधिक गम्भीर दिखाई पड़ती है। गैर कृषि क्षेत्र का विश्लेषण करने पर यह अनुमान लगाया जाता है कि उच्च जोतों में ही गैर-कृषि से आय अधिक है, मजदूरी क्षेत्र में सर्वाधिक आय 0-2 बीघे के जोतों के अन्तर्गत आते हैं। क्योंकि इन परिवारों में अनपढ़ व्यक्तियों की संख्या अधिक है, जिस कारण इन्हें अच्छी नौकरी न मिलने के कारण ये मजदूरी कार्य से आय अर्जित करते हैं। नौकरी क्षेत्र में सर्वाधिक आय 6 बीघे से ऊपर वाले जोतों का है। इसमें आय का प्रतिशत 58.59 प्रतिशत है जबकि 6 बीघे से ऊपर वाले जोतों में कुल आय का 46.74 प्रतिशत भी सर्वाधिक है।

मुंडेली गांव में व्यय की स्थिति को सारणी-5 से स्पष्ट किया गया है:

सारणी-5

व्यय की स्थिति				(औसत प्रति परिवार प्रतिशत में)			
जोतों का आकार	उपभोग	कृषि	शिक्षा	धार्मिक	वेश-भूषा	अन्य	योग
0-2	30	12	16	8	10	24	100
	(20.54)	(9.68)	(33.61)	(16.67)	(9.43)	(17.14)	
2-4	24.32	21.18	5.77	9.12	18.23	21.28	100
	(21.92)	(22.58)	(15.97)	(25)	(22.64)	(20)	
4-6	24.32	21.62	5.91	8.11	21.62	18.92	100
	(24.66)	(25.80)	(16.81)	(25)	(30.19)	(20)	
6 से ऊपर	20.69	22.41	6.90	6.90	17.24	25.86	100
	(32.88)	(41.94)	(33.61)	(33.33)	(37.74)	(42.86)	
योग	23.87	20.27	7.78	7.85	17.33	22.89	100
	(100)	(100)	(100)	(100)	(100)	(100)	

सारणी-5 से स्पष्ट है कि सर्वाधिक व्यय का प्रतिशत उपभोग क्षेत्र मे 23.87 प्रतिशत है तथा कृषि, शिक्षा, धार्मिक कार्य, वेशभूषा एवं अन्य क्षेत्रों में व्यय का प्रतिशत क्रमशः 20.27, 7.78, 7.85, 17.33 एवं 22.89 है। यदि जोतों के आकार पर दृष्टिगत करें तो 0-2 जोतों के आकार के अन्तर्गत सर्वाधिक व्यय उपभोग में ही किया जाता है, जो कुल व्यय का 30 प्रतिशत है। इसके अलावा वेश-भूषा, कृषि, शिक्षा, धार्मिक कार्य एवं अन्य क्षेत्रों में व्यय का प्रतिशत 10,12,16,8 तथा 24 है। 2-4 बीघे के जोतों के अन्तर्गत सर्वाधिक व्यय उपभोग में 24.32 प्रतिशत है जबकि सबसे कम शिक्षा पर 5.77 प्रतिशत व्यय किया जाता है। धार्मिक कार्य एवं वेश-भूषा में क्रमशः 9.12 प्रतिशत तथा 21.18 प्रतिशत व्यय किया जाता है। 4-6 बीघे के अन्तर्गत भी सबसे अधिक व्यय उपभोग में ही किया जाता है जो कुल उपभोग का 24.32 प्रतिशत है जबकि कृषि, शिक्षा, धार्मिक, वेश-भूषा एवं अन्य क्षेत्रों में क्रमशः 21.62, 5.91, 8.11, 21.62 एवं 18. 92 प्रतिशत व्यय किया जाता है। 6 बीघें से ऊपर वाले जोतों में कुल व्यय का सर्वाधिक व्यय प्रतिशत अन्य क्षेत्रों से 25.86 प्रतिशत है जबकि उपभोग पर 20.69 प्रतिशत ही है। कृषि, शिक्षा, धार्मिक कार्य में क्रमशः 22.41, 6.90 तथा 6.90 प्रतिशत व्यय किया जाता है। यदि प्रत्येक क्षेत्र में व्यय की स्थिति को देखें तो उपभोग में सर्वाधिक 6 बीघे से ऊपर वाले परिवार व्यय करते हैं, जो कि 32.88 प्रतिशत है तथा सबसे कम 0-2 बीघे वाले परिवार का 20.54 प्रतिशत व्यय है जब कि 2-4 तथा 4-6 बीघे जोतों के आकार वाले परिवारों का उपभोग पर व्यय बराबर है। कृषि में सर्वाधिक व्यय 6 बीघे से ऊपर वाले परिवारों का व्यय 9.68 प्रतिशत है। शिक्षा में सर्वाधिक व्यय 2-4 बीघे वाले परिवार करते हैं। धार्मिक क्षेत्र में सर्वाधिक व्यय 6 बीघे से ऊपर वाले परिवार करते हैं जो कि 33.33 प्रतिशत है। वेश-भूषा तथा अन्य क्षेत्रों में भी इन्हीं परिवारों का प्रतिशत अधिक है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ग्रामीण ऋणग्रस्तता की अधिक विसंगतियों का प्रमुख कारण मुंडेली गांव के लोगों का आवश्यकता से अधिक फिजूल खर्चा किया जाना है।

मुंडेली गांव में बचत की स्थिति का निर्धारण करने के लिए कुल आय में से व्यय को घटाकर औसत प्रति परिवार की बचत को सारणी-6 से प्रदर्शित किया गया है:

सारणी-6

बचत की स्थिति

(औसत प्रति परिवार रु. में)

जोतों का आकार	आय (रु. में)	व्यय (रु. में)	बचत (रु. में)
0-2	8750.00	12000.00	-3750.00
2-4	12225.00	16450.00	-2225.00
4-6	24685.00	18500.00	+6185.00
6 से ऊपर	55625.00	29000.00	+26625.00

सारणी-6 से स्पष्ट है कि मुंडेली गांव में ऋणग्रस्तता की स्थिति 0-2 एवं 2-4 बीघे वाले परिवारों में मिलती है जो क्रमशः 3,750 रुपये तथा 2,225 रुपये प्रति परिवार है जबकि 4-6 एवं बीघे से ऊपरवाले जोतों में ऋणग्रस्तता की स्थिति नहीं मिलती है। इस प्रकार मुंडेली गांव में ऋणग्रस्तता की स्थिति 30.52 प्रतिशत है।

निष्कर्ष

उक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण ऋणग्रस्तता के निम्न कारण हैं:—

(1) ग्रामीण ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या का बढ़ता हुआ सैलाब है, जिससे समाज में विसंगतियां उत्पन्न होती जा रही हैं।

(2) ग्रामीण क्षेत्रों में जहां कृषि का प्रश्न है, यहां पर छोटी एवं छितरी जोतें पायी जाती हैं, जिस कारण ऐसे छितरे खेतों के कारण समय एवं धन का अधिक अपव्यय होना स्वाभाविक है। ऐसी परिस्थिति में धन के अन्य स्रोतों के अभाव के कारण ऋण पर आश्रित रहना पड़ता है।

(3) सर्वेक्षण परिवारों से यह स्पष्ट होता है कि यहां पर कृषि उपकरण तथा तकनीक पिछड़ी हैं। कुछ बड़े जोतों वाले परिवारों के पास नए कृषि उपकरण तथा तकनीकें हैं, फिर भी छोटे जोतों वाले परिवार अधिक उत्पादकता बढ़ाने के लिए कृषि तकनीकों का प्रयोग करने के लिए इन्हें ऋणग्रस्तता की ओर प्रेरित करती हैं क्योंकि आय कम होने के कारण ये किसान आने वाली फसल में

ऋण का चुकता करने के लिए ऋण दाताओं को आश्वासन देते हैं, जिस कारण अधिकतर छोटे किसान ऋणग्रस्तता की चपेट में फंसे रहते हैं।

(4) यह भी देखा गया है ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन अधिक है, जैसा कि मुंडेली गांव से स्पष्ट है। जहां पर 13.3 प्रतिशत परिवार संयुक्त रूप से रहते हैं। जिस कारण ऐसे परिवार में आधे से अधिक व्यक्ति बेकार रहकर परिवार में भार के समान हैं। ऐसी स्थिति में ऋणग्रस्तता की स्थिति स्पष्ट रूप से दिखायी देती है।

(5) सर्वेक्षण-गत परिवारों से यह भी पता चलता है कि यहां पर शिक्षा के प्रति लोगों में अधिक जागरूकता नहीं पनपी है। ज्यादातर व्यक्ति कम पढ़े लिखे हैं, जिस कारण ये अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को सुधारने में असमर्थ साबित हुए हैं और हर कार्य के लिए इन्हें ऋणदाताओं पर आश्रित रहना पड़ता है, ऐसे व्यक्ति ऋणग्रस्तता की चपेट में आ जाते हैं।

(6) ग्रामीण क्षेत्रों में यह भी देखा गया है कि यहां पर अधिकतर लोग पशुपालन में अपना समय एवं धन लगाते हैं। इन्हें न तो अच्छी नस्ल के पशु मिल पाते हैं और न ही ये पशुओं की अच्छी प्रकार से देख-रेख कर पाते हैं अर्थात् कहा जा सकता है कि जितना खर्च ये व्यक्ति गैर कृषि कार्यों पर करते हैं, उससे कम आय इन्हें इन क्षेत्रों से प्राप्त होती है जो कि ग्रामीण समाज की ऋणग्रस्तता का एक प्रमुख कारण साबित हो सकता है।

(7) ग्रामीण व्यक्ति अपनी आय को मद्देनज़र रखते हुए धार्मिक कार्यों, पूजा-पाठ में अच्छा व्यय करते है ऐसे अवसरों पर अधिकतर ग्रामीण व्यक्ति ऋण लेते देखे जा सकते हैं।

(8) सर्वेक्षण-गत परिवारों में यह भी देखा गया है कि सामाजिक कार्यो जैसे शादी, विवाह, मेलों आदि पर अधिक व्यय किया जाता है।

(9) यहां पर यह भी देखा गया है कि जिन व्यक्तियों को सरकार द्वारा ऋण दिये गये हैं, उन्होंने उस ऋण को सम्बन्धित क्षेत्र में न लगाकर सरकारी धन का अनुचित प्रयोग किया है जिस कारण ये व्यक्ति सरकारी ऋण से ग्रस्त पाये गये हैं।

(10) सर्वेक्षण-गत परिवारों से यह स्पष्ट है कि यहां पर छोटी जोतों के परिवारों का व्यय आय की अपेक्षा अधिक है। उक्त अतिरिक्त धन को ये व्यक्ति ऋण से पूरा करते होंगे, यही इनकी ऋणग्रस्तता का कारण है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र में उक्त कारणों से ग्रामीण समाज आज भी ऋणग्रस्तता की काली साया से ग्रस्त है, जिस कारण ग्रामीण क्षेत्रों में निम्न जीवन-स्तर का पाया जाना स्वाभाविक है।

द्वारा–ठाकुर सिंह रावत
हरि आनन्द भवन, रामबाग,
उत्तर मानपुर रामपुर रोड, हल्द्वानी
नैनीताल, (उ.प्र.)

महिला समृद्धि योजना से करोड़ों महिलाओं को लाभ

2 अक्तूबर, 1993 से प्रारंभ महिला समृद्धि योजना से इस वर्ष एक करोड़ ग्रामीण महिलाओं को लाभ होगा। आठवीं योजना के अंत तक इस योजना के अंतर्गत छह करोड़ महिलाओं को लाभ मिलेगा। यह जानकारी महिला एवं बाल विकास राज्य मंत्री श्रीमती बसवाराजेश्वरी ने 27 सितम्बर को नई दिल्ली में आयोजित राज्यों के महिला एवं बाल विकास मंत्रियों और सचिवों की बैठक में दी।

उन्होंने बैठक में बताया कि महिला एवं बाल विकास विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय के साथ बातचीत करने और तालमेल बिठाने के बाद ही महिलाओं के कल्याण कार्यक्रम चला सकेगा ताकि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को 30 प्रतिशत आरक्षण के प्रावधान का पूरा लाभ मिल सके।

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एल) 12057/93
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN 708/57
P& T Regd No. D (DL) 12057/93
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली - 110001 द्वारा प्रकाशित और आकाशदीप प्रिन्टर्स, नई दिल्ली - 110002 द्वारा मुद्रित